।। चतुर्थ अध्याय ।।

—=:: अ.गो. शेवड़ेजी के उपन्यासों में चित्रित नायिकाओं का मनोविज्ञान ::=—

अ) मनोवैज्ञानिक उपन्यास :

आधुनिक काल यंत्रयुग है । मानव का जीवन विज्ञान पर निर्भर होने लगा है । इसी कारण मनुष्य जीवन अनेक शृंखलाओं में, अनेक गुत्थीयों में गूँथता जा रहा है । 1914 ई. से 1918 ई. तक और 1939 ई. से लेकर 1945 ई. तक हुए मानवीय संहारक युध्दों के कारण मानव भयभीत हो गया है । वैज्ञानिक प्रगति से मानव वैयक्तिक एंव सामाजिक तथा सांस्कृतिक जटीलताओं को सुलझाने का प्रयत्न करने लगा । "दैनिक मान्यताएँ स्वयं नष्ट होकर यथार्थवादी सीमाओं के घेरे में सिमट गई है आज प्रत्येक सामाजिक सत्य वैयक्तिक सत्य से प्रभावित है ।"[1] औधोगिक क्रांति तथा महायुध्दों के भयानक प्रभावों ने समग्र कला और मनुष्य की वैज्ञानिकता पर गहरा असर किया । मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का जन्म दो महासमरों के उपरान्त निर्मित परिस्थितियोंव्दारा हुआ । युध्दोपरान्त प्रत्येक राष्ट्र का नैतिक और आर्थिक पतन कमाल हो गया । ऐसे अभाव ग्रस्त दुर्दशा को लेकर इस काल में जो उपन्यास लिखे गए उनपर फ्रायड़, सार्त्र, आदि क्रांतिकारी विचारकों का प्रभाव पाया जाता है । विशेषत: फ्रायड़ की अवचेतन जगत् की खोज ने उस समय के उपन्यास कारों को जादा प्रभावित किया । अत: यह कहना अनुचित न होगा कि, "मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के निर्माण के पीछे केवल विश्व-युध्दोत्तर परिस्थितियाँ ही नहीं अपितु फ्रायड़ की विचार धारा भी कार्यान्वित है । भारतीय मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार इस विषय में पाश्चात्य साहित्यकारों के ऋणी हैं ।"[2]

स्वातंत्र्योत्तर भारत की राजनीतिक, आर्थिक एवं सामाजिक परिस्थितियों ने भारतीय साहित्य एवं कला में महान मोड़ उपस्थित किए हैं । गांधीजी के अहिंसावादी प्रयोगों के परिणाम, आर्थिक दृष्टया विकास हेतु कार्यान्वित की गई पंचवार्षिक योजनाओं में हुए समृध्दि, समाज को नया दायरा प्रदान करने के लिए किये गए कार्य तथा, "भारतीय संस्कृति को पाश्चात्य शैली में ढ़ालने के प्रयत्न मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की पृष्ठभूमि को प्रस्तुत करते हैं ।"[3] मानव मन की खोज़ आज के मनोवैज्ञानिक उपन्यास कारों की प्रबल आकांक्षा रही है ।

BARR. BALASAHEB KHARDEKAR LIBRARY
SHIVAJI UNIVERSITY KOLHAPUR

"मनोविज्ञान" मन का विज्ञान है । डॉ. देवराज उपाध्याय के अनुसार मनोवैज्ञानिक उपन्यास की व्याख्या इस प्रकार यदि किसी उपन्यास में घटना या अनुभूति के आत्मनिष्ठ रूप को अभिव्यक्ति पर पाएँगे तो उसे मनोवैज्ञानिक उपन्यास कहेंगे ।"[4] मनोविज्ञान का अंग्रेजी पर्याय-वाची शब्द "सायकॉलॉजी" (Psychology) है । "सायकॉलॉजी वह विज्ञान है जिसमें मनुष्य की आत्मा के विषय में चर्चा होती है ।"[5]

मनुष्य की प्रत्येक क्रिया मूल रूप में उसके मानस से सम्बध्द होती है । अतः उसकी सृजनात्मक क्रिया को समझने के लिए उसकी मानसिक स्थिती का अध्ययन आवश्यक होता है । "फ्रायड़ के अनुसार लेखक अपनी दमित वासनाओं का उदात्तीकरण करके समाज में साहित्यव्दारा प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त करता है । पाठक भी साहित्य के अध्ययन से अपनी तिरस्कृत कामनाओं को उदात्त रूप प्रदान करता है ।"[6] साहित्य में मनुष्य जीवन ही नहीं बल्कि जीवन की वे कामनाएँ जो पूरी जिंदगी में खत्म नहीं होती, चित्रित रहती है । इस तरह हम कह सकते हैं कि साहित्य से मनोविज्ञान का संबंध घनिष्ठ है । उपन्यास और कहानी दोनों के लिए मनोविज्ञान की उपयोगिता स्वीकार्य है । प्रेमचंदजी ने भी कहा है, "मैं उपन्यास को मानव जीवन का चित्र मात्र समझता हूँ । मानव चरित्र पर प्रकाश ड़ालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्त्व है ।"[7] तात्पर्य यह कि मानव का संपूर्ण जीवन विशेषतः उसके आंतरिक जीवन का लेखा-जोखा उपन्यासव्दारा किया जा सकता है ।

आज जीवन के हर क्षेत्र में मनोविज्ञान का असर पाया जाता है । अतः उससे हटकर रहना अनुचित होगा । फ्रायड़, एड़लर, युंग हेवलॉक एलिस आदि पाश्चात्य मनोवैज्ञानिकों व्दारा इस क्षेत्र का ज्ञान भारतीय मनोवैज्ञानिकों को प्राप्त हुआ है । "मनोविज्ञान का सबसे बड़ा विशेष उपन्यास में आया है वह यह कि पापी, विद्रोही, अपराधी आदि के अंतःप्रवृत्तियों का मनोविश्लेषण व्दारा अध्ययन करके यह ज्ञात किया जाने लगा है कि किन परिस्थितियों की प्रेरणा से बाध्य होकर इन्हें ऐसा करने के लिए विवश होना पड़ा । फिर पापी और अत्याचारी घृणा के नंही अपितु सहानुभूति के पात्र होने लगे । नारी की सामाजिक दुर्बलता को भी इन लेखकोंव्दारा संवेदना प्राप्त हुई ।"[8]

मानव मन को फ्रायड़ ने तीन भागों में विभाजित किया है ।

1. चेतन (Conscious)
2. उपचेतन अथवा चेतन मन (Sub-Conscious)
3. अचेतन मन (Unconscious Mind)

फ्रायड़ ने अपनी मनोवैज्ञानिक पध्दति का आधार तीन प्रमुख बातों को माना है -

1. अचेतन मस्तिष्क (Unconscious Mind)
2. लिबिड़ो (Libido) कामभावना
3. ग्रंथियाँ (Complex)

फ्रायड़ के अनुसार अचेतन मन चेतन मन की अपेक्षा जादा शक्तिशाली होता है । वह मनुष्य के दबाव से बनी प्रवृत्तियों का एक ढ़ेर है । इसलिए उसमें छिपी हुई दमित परतों को अनावृत्त करके देखना आवश्यक होता है । अचेतन मन अनेक रूपों में विश्लेषित किया गया है ।

फ्रायड़ ने यौन इच्छाओं को स्वाभाविक और अनिवार्य बतलाया है और जीवन के विकास में इसकी सापेक्षता प्रमाणित की है । सभ्यता एवं सांसारिक माँगों के अनुसार अपने व्यक्तित्व को परिवर्तित करनेवाले अंश को "अहंभाव" कहते है । "यही अहंभाव अपरिष्कृत अंतःप्रेरणाओं को नियंत्रित करता है उन्हें परिष्कृत तथा परिशोधित क्रियाशील होने की अनुमति देता है । वह प्राकृतिक स्वत्त्व (It wants) और (Ego) (I will not) तथा सुपरईगो से माना गया है ।"[9]

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के पात्रों का चरित्रचित्रण औपन्यासिक पात्र और ईश्वर व्दारा निर्मित जगत् के पात्र में समय, स्थान और कार्य के अनुसार आजकल कोई अंतर नही है फर्क इतना रहता है कि औपन्यासिक पात्र किसी जीवित पात्र का यथातथ्य रुप नहीं हो सकता । "इसका कारण उपन्यासकार उनका सृजन करते हुए एक का आकार-प्रकार, तो किसी दूसरे का गुणावगुण और किसी का कार्यव्यापार को ध्यान में रखकर एक ऐसी शब्द मूर्ति गढ़ता है और अपनी कल्पना से उसमें रंग भर देता है ।"[10]

जुंग ने "अचेतन मन के क्षतिपूरक व्यापार" (कम्पेन्सेटरी फंक्शन) नामक सिध्दान्त व्दारा व्यक्तित्व को कुछ विशेष प्रकारों में विभाजित किया है ।"[11]

'मानव'[12]

अ) बहिर्मुखी	**ब) अंतर्मुखी**
1. विचारक	1. विचारक
2. भावुक	2. भावुक
3. संवदेक	3. संवेदक
4. अंतदर्शक	4. अंतदर्शक

अ) बहिर्मुखी :

ये पात्र हमेशा प्रसन्नचित्त, संसार की दैनंदिन बातों में अभिरुचि रखनेवाले और सामाजिक प्रवृत्ति के होते हैं । उनमें कल्पना का अभाव होता है । वे कभी-कभी निरुत्साहित भी होते हैं । इसमें चार उपवर्ग है ।

ब) अंतर्मुखी :

मनोवैज्ञानिक उपन्यास के चरित्र इसी कोटि में आते हैं जिनमें भावावेग कम मात्रा में पाया जाता है ।यथार्थ जगत् की अपेक्षा कल्पना जगत् में रममाण होनेवाले, अपनी मान्यता-ओं या सिध्दान्तों की स्थापना कर उसको कार्यान्वित करने का प्रयत्न करनेवाले मानवता तथा सहिष्णुताकी उपेक्षा करने वाले क्रांतिकारी तथा सिध्दांतवादी पात्र इस श्रेणी में रखे जाते हैं । इसमें भी चार उपवर्ग है ।

शेवड़ेजी ने मनोवैज्ञानिकता के इन तथ्यों का अपने उपन्यासों में प्रयोग किया है । नारियों की यौन भावना, अहंभावना, लिबिड़ो, अथवा अन्य दमित इच्छाओं का चित्रण करते

समय फ्रायड़ के तत्वों का आधार ने लिया है परंतु उसी प्रवाह में ये नारियाँ बहती नहीं। इन नारियों में भारतीय संस्कारों की जड़े मजबूत होने के कारण ह्दय परिवर्तन से उनका उध्दार हो जाता है। जैसे –

" मंगला " उपन्यास की "मंगला" अपने "अंह" के कारण चंद्रकान्त के भुलावे में आकर पतिता होती है, लेकिन गाँधीजी के ह्दय परिवर्तनव्दारा शेवड़ेजी ने उसे फिर से मार्गस्थ किया, पथ-भ्रष्टा होने से बचाया। "इंद्रधनुष्य" की "वीणा" का भी यही हाल है। "अधूरा सपना" की सुहासिनी भी अपने "अहं" के कारण परिस्थिति के जाल में फँस जाती है।

अपने उपन्यासों में शेवड़ेजी ने नायिकाओं का चित्रण करते समय उनके सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों को बड़े मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया है। इन नायिकाओं के जीवन में नारीसुलभ भावनाएँ कैसे और क्यूँ निर्माण होती है, इसे भी उन्होंने बताया है। साथ ही साथ परिस्थिति वश किये गए उनकी गलतियों को शेवड़ेजीने सहानुभूति प्रदान की है।

ब) शेवड़ेजी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास :

प्रेमचंद्रोत्तर कालीन हिन्दी उपन्यासकारों में शेवड़ेजी का स्थान महत्वपूर्ण रहा है। शेवड़ेजी ने अपने युग के वातावरण तथा परिस्थितियों का यथार्थ चित्रण अपने साहित्य में किया है। स्वातंत्र्योत्तर काल की विभिन्न परिस्थितियों का तथा निर्माण हुये संकटों का प्रतिबिंब उनके साहित्य में दिखाई देता है। शेवड़ेजी के उपन्यासों में सामाजिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक, आर्थिक नैतिक आदि पहलुओं का उद्घाटन हुआ है। यह सभी पहलू आदर्शवाद की ठोस बुनियाद पर खड़े है जिससे उनका साहित्य विश्वमंगल की भावना व्यक्त करते हुए भी भारतीय दर्शन का अभिमान लिए हुआ है।

शेवड़ेजी के प्रत्येक उपन्यासों में नवीनता है। उपन्यास में उन्होंने मानव के गुण दोषों सहित उसे चित्रित किया है। अपने युग के महत्वपूर्ण क्रान्तिकाल में साहित्य के उत्तरदायित्व उन्हें पूरा ज्ञान था। वे कहते हैं –

"साहित्य ऐसा हर्गिज नहीं कर सकता ? साहितय "आयवरी ऑवर" में या काँच के मकान में रहकर दूर से तमाशा नहीं देख कसता, ताकि उसको आँच न लागे । साहित्य का काम केवल घुँघरू बाँधकर लोगों का मनोरंजन करना नहीं है । साहितय एक शक्ति है एक महान् सामर्थ्य है । वह केवल अपने स्वप्नों में खोकर निष्क्रिय नहीं बैठ सकता । उसे जाग्रत रहना है, सचेत रहना है, क्रियाशील रहना है । अपने इस महान् कर्तव्य से वह विमुख नहीं हो सकता ।"[13] शेवड़ेजी जीवन के प्रति साहितय की प्रतिबध्दता माननेवाले लेखक रहे है और अपने साहितय से उन्होंने यही सिध्द किया है । उनके साहित्य में "कला जीवन के लिए ।" यही दृष्टिकोन दिखाई देता है ।

शेवड़ेजी ने अपने उपन्यासों में नारीजीवन का अच्छा चित्रण किया हे । नारी जगत को वे महेशा सम्मान देते आए है । जिन उपन्यासोंव्दारा नारीजगत के प्रति सम्मान बढ़ता है उन उपन्यासों को उन्होंने पसंद किया है । शेवड़ेजी के उपन्यासों में चित्रित नारी पात्रोंपर भारतीय परंपरा, संस्कृति की अमिट छाप हैं । मानवीय जीवन में स्त्री और पुरूष दोनों का स्थान समान हे । "नारी के बारे में माता, बहन, और पत्नी के रूप में जो चित्रण हुए है वे संपूर्णतः आदर्शवादी हे । यदि कहीं नारी भूल करती है तो वहाँ वे उसका मन परिवर्तन करते है ।"[14] नारी का चित्रण उन्होंने संयमता तथा मर्यादा से किया है । अत्यंत श्रृंगारिक तथा यौन-आकर्षण का तथा शारीरिक उद्‌दाम भावनाओं का वर्णन भी उन्होंने संतुलितभाव से किया हे । श्रीमती यमुना शेवड़ेजीने कहा है - "वे नारी के बारे में हमेशा आदर्शवादी दृष्टिकोन ही अपनाते रहे ।"[15]

शेवड़ेजी के नारी पात्र सह्रदय, भावना प्रबल होते है । उनके आंतरिक संघर्ष तथा मनावैज्ञानिकता का समन्वय शेवड़ेजी ने अत्यंत कुशलता से किया है । शेवड़ेजी ने "नारी मनोविज्ञान तथा नारी के यौन पक्ष" की ओर नारी की माता बनने की दमित और अतृप्त इच्छा उसके जीवन को कैसा मोड़ देती है इसका विश्लेषण किया है ।"[16] शेवड़ेजी ने नारी के यौन पक्ष तथा मातृत्व की दमित इच्छाओं का चित्रण करते वक्त उनहें विद्राही रूप में भी प्रस्तुत किया है किंतु ये सभी भारतीय संस्कारों में पलनेवाली होने के कारण ह्रदय परिवत्रन के कारण पथ - भ्रष्ट नहीं होती । जैसा कि

"मंगला" उपन्यास की "मंगला", "इंद्रधनुष" की "वीणा" । शेवड़ेजी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में नारी जीवन की ओर अत्यंत सहानुभूति से देखा गया है । उनके जीवन में दमित इच्छाओं के कारण होनेवाले उत्थान का विश्लेषण शेवड़ेजी ने मनोवैज्ञानिक ढंग से किया है ।

शेवड़ेजी ने लगभग ग्यारह उपन्यास लिखें हैं । उनके इन उपन्यासों का वर्गीकरण पीछे किया गया है । अध्ययन के लिए चुने गए उनके मनोवैज्ञानिक उपन्यास निम्न प्रकार के हैं -

	उपन्यास	साल
1.	मृगजल	(1949 ई.)
2.	निशागीत	(1950 ई.)
3.	पूर्णिमा	(1950 ई.)
4.	मंगला	(1958 ई.)
5.	अधूरा सपना	(1959 ई.)
6.	इंद्रधनुष	(1966 ई.)

इन उपन्यासों की नायिकाएँ क्रमशः इस प्रकार है -

	उपन्यास	नायिकाएँ
1.	'मृगजल'	"मरियम"
2.	'निशागीत'	"नर्स सुशीला राजेश्वर"
3.	'पूर्णिमा'	"पूर्णिमा"
4.	'मंगला'	"मंगला"
5.	'अधूरा सपना'	"सुहासिनी"
6.	'इंद्रधनुष'	"वीणा"

इन उपन्यासों के पात्रों के मनोव्यापार सूक्ष्मता से चित्रित करने से शेवड़ेजी ने नारी जीवन की ओर सहानुभूति से देखकर उनकी दमित इच्छाओं का चित्राण बड़ी सहृदयता किया है । शेवड़ेजी के इन उपन्यासों की नायिकाओं का मनोविज्ञानिक चित्रण निम्न प्रकार किया है ।

" मृगजल " उपन्यास की नायिका " मरियम " का मनोविज्ञान :

"स्वातंत्रता प्रप्ति के बाद प्रकाशित उपन्यासों में सर्वश्रेष्ठ उपन्यास के रूप में, मध्यप्रदेश शासनद्वारा पुरस्कृत यह उपन्यास है । शेवड़ेजी का यह उपन्यास अत्यंत रोचक है । इसमें प्रमुख चार पात्र हैं । एक अशोक ठाकुर "आर्टिस्ट" और तीन स्त्रियाँ जो भिन्न भिन्न स्वाभाव की है । प्रस्तुत उपन्यास में, "कला जीवन के लिए ?" या कला कला के लिए ?" इन प्रश्नोंद्वारा उपन्यास के नायक के जीवन के रंग दिखाए हैं । इन प्रश्नों में उलझे अशोक ठाकुर के जीवन में भिन्न भिन्न मोड़ों पर तीन स्त्रियाँ आती है । एक है श्रीमती मायादेवी नीलकंठ, दूसरी है मरियम और तीसरी श्रीमती अरूणादेवी । इन तीन ही स्त्रियों के कारण अशोक ठाकुर अपनी कला - चित्रकला की ओर कम-अधिक प्रभावित होकर झुक जाता है । अशोक "जीवन के लिए कला"मानने के लिए पहले राजी नहीं है, उसके सामने यही प्रश्न है कि, स्त्री और कला में क्या समन्वय संभव है ? और इसी संघर्ष के दौरान इन तीन स्त्रियों के साथ उसका संबंध किस प्रकार आता हे यह प्रस्तुत उपन्यास में दिखाया गया है । इन तीन स्त्रियों में से श्रीमती अरूणादेवी अशोक ठाकुर की पत्नी होते हुए भी उपन्यास की नायिका का स्थान नहीं प्रापत कर सकती और न मायादेवी नीलकंठ । उपन्यास की नायिका बनती है मरियम क्यों कि उपन्यास के अंत में नायक अशोक सिर्फ मरियम की ही कामना करता है और उसे वह प्राप्त भी होती हे । मरियम का चित्रण शेवड़ेजी ने इस तरह किया है ।

व्यक्तित्त्व -

चित्रकार अशोक अपनी चित्रकारी के सिलसिले में पाढ़र (पाद्रीपुर) गाँव में पहुँचता है तब उसकी मरियम से मुलाकात होती है । मरियम का व्यक्तित्त्व लुभावना है । उसका वर्ण

गोरा, आँखे भावुक और विशाल हैं । वह गाँव में रहने के कारण भोली-भाली, अल्हड़ युवती हैं । उसकी आयु बीस-इक्कीस वर्ष की हैं । उसके सुनहरे बाल अंग्रेजी फॅशन से कटे हुए हैं । चेहरा कुछ लम्बा, नाक भी लम्बी, होंठ पतले । मध्यम कद है, लेकिन बदन इकहरा होने के कारण उँचा दिखता हैं । सौंदर्य-भूषा की मरियम को उतनी परवाह नहीं दिख पड़ती हैं ।

शिक्षा –

मरियम सफाई से हिंदुस्थानी बोलती है बीच-बीच में अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग भी शुध्द और साफ उच्चारण के साथ करती हैं । उसकी बुध्दि तीक्ष्ण है । हाव-भाव और व्यवहार में चापल्य है तथा पूरी तरह खुली । संकुचित नहीं हैं किंतु वह उत्शृंखल भी नहीं है । मर्यादाशील ऐसी मरियम है । वन्यजीवन के कारण उसके स्वभाव में खुलापन है । उसकी वाणी में भी सुरीला पन है, नम्रता है । उसे कला में भी रुचि हैं ।

मरियम ईसाई लड़की है और वह अनाथ है । लखनऊ के मिशनरी अनाथालय में से उसे मिस टॉमस अपने साथ ले आती है । तब से मरियम उन्हीं के साथ रहती है । उनसे वह अंग्रेजी सीखती है, धर्मोपदेश देना तथा भजन आदि सीखती है । मिस टॉमस मरियम को भिक्षुणी की दीक्षा देना चाहती है । लेकिन मरियम इसे टालती है ।

मरियम को प्रकृति की सुषमा का अनिवार्य मोह है । उसका जन्म कश्मीर के वन्य प्रदेशों में होने के कारण उसे वृक्षों-फूलों, पहाड़-चट्टानों से, निर्झर-सरोवरों से लगाव है । अनाथालय के जीवन के कारण बचपन में ही उसे जीवन के कटु अनुभवों का ज्ञान हो गया । और वह प्रकृति में अपना सुख ढूँढ़ती है । "यही कारण है जो मुझे चमकता हुआ सूर्य – प्रकाश, गाती हुई कोयल, लहलहाते हुए फूल और शीतल चंद्र – किरणें हमेशा आकर्षित करती हैं ।" [17]

मरियम ने जीवन के अल्प अनुभवों से ही शिक्षा प्राप्त की है । न वह स्कूल गई है और नहीं कॉलेज । फिर भी उसकी प्रखर बुध्दिमत्ता, विचारों की प्रौढ़ता उसके अनुभव पूर्ण वाक्यों तथा अभिप्रायों में झलकती है । उसकी सारी जिंदगी अनाथालय में और बाद में सतपुड़ा के जंगल ग्राम पाद्रीपुर में ही बीती हैं । दुनिया का या समाज का उसे बहुत अनुभव नहीं है । पुस्तकें भी उसने ज्यादा नहीं पढ़ी है । " फादर विल्यम्स की वात्सल्य की छाया में जो भी सीखा - पढ़ा होगा, वही इसकी सारी पूँजी मालम पड़ती है । तिस पर भी दुनिया का व्यवहार ज्ञान उसे कितना अधिक है ? आश्चर्य है ।"[18]

कृतज्ञता का भाव -

मरियम मिस टॉमस के प्रति हमेशा कृतज्ञ रहती हैं । लगभग ग्यारह-बारह सालों से मरियम मिस टॉमस के पास रहती है । मरियम उनके खाने-पीने का, कपड़ों का ध्यान रखती है । मिस टॉमस की तबीयत खराब रहती है, इसलिए उनकी दवा-दारू का ख्याल भी वह रखती है । मिस टॉमस के एकाकी जीवन को कुछ मदत करने की इच्छा मरियम में हमेशा दिखाई देती है ।

मरियम को भिक्षुणी बनकर रहना पसंद नहीं है लेकिन मिस टॉमस की इच्छा है कि उसे भिक्षुणी बना दिया जाय । अपनी इच्छा के बावजूद भी मरियम उनका दिल नहीं दुखाती वह अपनी इच्छा कभी भी उनके सामने प्रकट नहीं करती । कई बातों में मरियम और मिस टॉमस के मतभेद भी है ।

स्पष्टवक्ती -

मरियम सरल हृदया है । उसमें शिष्टता और संस्कारिता है । इसी कारण मन में आई बातों को वह बिना झिझके अशोक जैसे आर्टिस्ट के सामने भी व्यक्त करती है । मायादेवी का चित्र देखकर वह अशोक से अपना मत निर्भिकता से तथा स्पष्ट रूप से कहती

है । उस चित्र को देखकर मरियम की अवस्था का चित्रण शेवड़ेजी ने अत्यंत कुशलता से किया है – मरियम अपना सारा ध्यान लगाकर चित्र देखने लगती है और अशोक मरियम के चेहरे पर अंकित होनेवाले सूक्ष्माति सूक्ष्म भावों को अत्यंत उत्कंठता से देखने लगता है । उस चित्र को देखकर, रंगों की मोहक छटाओं को देखकर मरियम प्रथम दंग रह जाती है । किंतु यह कौतुक का भाव ज्यादा देर तक नहीं टिका उसका स्थान गांभीर्य ने ले लिया । "आँखों की सौम्य – दीप्ति, अथाह जल राशि की तरह स्थिर हो गई ।

और फिर उसके चेहरे पर द्वंद्व का भाव अंकित हो गया, कुछ हिचकिचाहट भी ।

फिर कुछ अरुचि का भाव, सूक्ष्म तिरस्कार का भाव । इसके उपरान्त एक निगूढ़ वेदना की छटा उसके चेहरे पर प्रतिबिंबित हो उठी, मानो उसके हृदय के अंतरतम भाग को ठेस पहुँची है ।"[19]

अशोक मरियम के इन भावों का निरीक्षण करता है और चित्र के बारे में उसकी राय पूछता है तब मरियम क्षमा माँगकर अपना मत व्यक्त करती है –

"तो लो बतलाती हूँ । मेरे दिल परइस चित्र का असर अच्छा नहीं पड़ा । ऐसा लगा कि यह चित्र एक निर्लज्ज, उन्मत्त विलासिनी का है और इसके अवलोकन से विषय वासना और कामुकता के भाव जागृत होते हैं । इसके देखने से हृदयपर जो भाव अंकित होते हैं वे हमें ऊपर उठानेवाले नहीं, नीचे गिरानेवाले होते हैं ।"[20]

इस मत को सुनकर अशोक वह चित्र फाड़ डालता है इसप्रकार मरियम अशोक जैसे आर्टिस्ट के सामने भी अपना मत अत्यंत स्पष्टता से कहने में भी नही डरती ।

सेवाभाव –

मरियम दयालू लड़की है । वह मिस टॉमस की कृतज्ञता से सेवा करती है । जब अशोक को मायाविनी का चित्र फाड़ डालते समय अँगूठे को घाव लग जाता है तब वह अत्यंत दु:खी होती है । अशोक के हाथ में लगा घाव इतना गहरा नहीं था किंतु मरियम अत्यंत तन्मयता से उसकी सुश्रूषा करती है । जैसे किस भयंकर दुर्घटना से वह बच निकला हो । मरियम का सारा स्नेह भाव परिचर्या में उमड़ पड़ता, मरहम-पट्टी की उस छोटी-सी प्रक्रिया में ही मानो उसके व्यक्तित्व की संपूर्ण अभिव्यंजना समाई हुई थी ।

पाद्रीपुर गाँव में कोई भी बीमार होता है तो उसकी मदद के लिए मरियम हमेशा तैयार है । सैमी की बीमार औरत के लिए वह दवा ले जाती है । छूत की बीमार से भी वह नहीं डरती और किसना कुनबी की माँ को प्लेग के समय मदत करती है । उम्र से छोटी होते हुए भी वह एक माँ की तरह गाँव के दु:खी जनों की सेवा करती है । इस वक्त वह जाँत-पाँत का भी खयाल नहीं करती । जोसेफकाका उसके बारे में कहते है –

"गजब की लड़की है, अब्दुल्ला भाई, गजब की । दिल की पक्की और अपनी जान की जरा भी परवाह न करनेवाली । वह है इसलिए पाद्रीपुर में रौनक है, नहीं तो – वह देखो, उसके पीछे बच्चे कैसे दौड़े जा रहे है ...।"[2]

जोसेफकाका मलेरिया से पीड़ित थे तब मरियम उनकी सेवा, परिचर्या अत्यंत मनोयोग से करती है । अशोक इसका एक चित्र बनाता है – "करूणा-मूर्ति" शीर्षक से । जिसमें मरियम और जोसेफ को चित्रित किया गया था । "मरियम की आँखो में सेवा, आत्मीयता, प्रेम करूणा और सहानुभूति के भावों का मधुर मिश्रण प्रतिबिंबित था । उसकी सात्विक आँखो में मानो समस्त नारी-जाति की, अनादि काल से चली आई हुई सेवा-भावना अंकित थी, और इस समय मरियम एक व्यक्ति-विशेष नहीं,

समस्त जगत् की परिचारिका के रूप में दृष्टिगोचर हो रही थी ।"[22]

प्रेम भावना –

मरियम बचपन से ही अनाथ होने के कारण माता-पिता के प्यार से सदैव वंचित रही है । इससमय यौवन के कारण उसमें नई उंमगे आ रही है और ठीक इसी समय अशोक जैसा सुंदर रसिक कलाकार उसके सामने आता है और मरियम अपने आप उसके प्यार की दीवानी हो जाती है । मरियम के प्रति अशोक भी अपने आपको रोक नहीं सकता । वह दोनों अकेले जब जाते हैं तब मरियम एक स्थान पर गिर पड़ती है तब अशोक उसे सँभालता है उसका हाथ पकड़कर आगे जाने लगता है तब मरियम सोचती है कि,"यह हाथ उसके जीवन के अंत तक उसे सहारा देता रहे तो कैसा अच्छा हो ।" [23]

इसतरह मरियम मन और ह्रदय से अशोक को चाहने लगती है । उसका अंत:करण निर्मल साफ है, भावनाएँ शुध्द है, स्नेह में कोई आसक्ती नहीं हैं इसकारण उसका प्यार अनोखा है । "वह कुछ माँगती नहीं है, चाहती नहीं हैं, देने में ही ,अर्पण करने में ही उसे सुख मिलता है । और उसने कभी अशोक के शरीर को मोहने का प्रयत्न नहीं किया है । उसकी भाषा आत्मा की मूक भाषा हैं, क्षुधा है तो ह्रदय की, शरीर की नहीं । ऐसे विशुध्द, गहरे स्नेह के प्रभाव से वह (अशोक)अपने आपको कैसे विलग रख सके ? "[24]

इसतरह प्रेम के बंधन से दोनों (अशोक – मरियम) का मीलन हो जाता है । "अशोक और मरियम-पुरूष और प्रकृति-एक संग खेलते रहते है, जिसका परिणाम यह होता है कि अशोक के प्रस्थान के बाद मरियम पर दुश्चरित्रता का लांछन लगाया जाता है और उसे भी गाँव और मिशन छोड़ना पड़ता हैं । [25]

इस घटना के बाद मरियम को स्नेह की एक बूँद भी प्राप्त नहीं होती, सिवा वीणा नामक नर्स के । मरियम अनेक आपदाएँ सहती रहती हैं लेकिन अपने बच्चो के खातिर जिंदा रहना चाहती है । उसकी यह जीजिविषा मातृत्व के कारण है जो अत्यंत आदर्श बनी है । "अशोक यद्यपि मरियम से गाँधर्व विवाह करता है, दुष्यन्त के समान ही उससे छल करता है तो भी मरियम साध्वी शकुन्तला के समान अनन्य भाव से उसी को ह्रदय में सँजोए रहती है । " [26] अशोक को वह अपने ह्रदय से चाहती थी । इसलिए वह किसी को भी नहीं बताती कि अपने बच्चे का बाप कौन हैं ? वह चाहती है कि अशोक को खींच-तानकर अपने प्रेम की जंजीर में जकड़ना मुष्किल है और स्वयं वह भी ऐसा नहीं चाहती ।

मातृत्व -

मरियम एक आदर्श, उदार नारी के रूप में चित्रित की गई है । अशोक के कारण वह माँ बननेवाली होती है और अशोक तो उसे छोड़कर जाता है तब मिस टॉमस की अवकृपा के कारण उसे निर्वासित किया जाता है लेकिन मरियम फिर भी अपने मातृत्व को वरदान के रूप में ही देखती है । स्वयं अनेक आपदाओं से गुजरती है लेकिन अशोक को कभी दोषी नहीं ठहराती ।

अरुणा और अशोक की शादी की बात सुनकर वह उद्विग्न हो जाती है । अशोक को उसने दी हुई वस्तूएँ मरियम वापस लौटाने जाती है । उस वक्त उसकी अवस्था अत्यंत बीमार ही थी । किसी तरह वह घर में पहुँचती है और अपने बच्चे को भी बीमार देखकर वह व्याकुल हो उठती है । वह कहती है, " ए मेरे मसीह ! यह कैसा क्रूर खेल है कि तूने मुझे और मेरे बच्चे को एक साथ ही बीमार किया ? , तुझे मालूम है कि मुझे अपने शरीर से जरा भी मोह नहीं है । जिस दिन अपने दामन में बुलावेगा उस दिन आने के लिए तैयार हूँ । पर क्या इस मासूम बच्चे को देखकर तुझे दया नहीं आती ? " [27]

मरियम की जीने की उमंग सिर्फ अपने बच्चे के खातिर ही रही थी। "अज्ञेय की रेखा (नदी के द्वीप) भ्रूण-हत्या करती है पर मरियम मातृत्व को वरदान मानकर उसका संरक्षण करती है। मरियम के लिए मातृत्व नारी-जीवन की चरम परिसमाप्ति है।" [28]

इस सक्त बीमारी में मरियम कुछ स्वप्न देखती हैं। मरियम 105 डिग्री बुखार में बड़बड़ाने लगी वह स्वप्न में देखती है कि, "एक भयंकर विकराल राक्षस उसका गला दबोच रहा है और वह जोर से चिल्ला उठी, " नहीं - नहीं, मुझे मत मारो, मत मारो,। मैं जिंदा रहना चाहती हूँ। अपने बच्चे के लिए जिन्दा रहना चाहती हूँ, ओह ! " [29]

जागने के बाद उसे यह भान नहीं है कि वह स्वप्न है या सत्य इसलिए अंधेरे में वह हाथ बढ़ाकर टटोलती है। सोचती है कि कहीं पास ही वह राक्षस तो नहीं खड़ा है।

फिर मूर्च्छित हो जाती है और दूसरा स्वप्न - "अब की बार उसने देखा कि उसका प्यारा बच्चा ही निश्चल पड़ा है और उसे सफेद चादर ओढ़ दी गई है।

फिर देखा कि जॉन साहब उसके बच्चे को उठाकर गिरजाघर की ओर ले जा रहे हैं। पीछे एक आदमी हरीकेन लालटेन लिए चल रहा है और उसके साथ एक कुदालीवाला है।

फिर देखा कि चार फूट का एक गड्ढा खोदकर जॉन साहब ने बच्चे को उसमें लिटा दिया है लेकिन उसकी आँखे टकटक खुली है। ज्यों ही जान साहब ने गड्ढे में मिट्टी डाली तो वह चीख उठी, "कैसे बेहरहम हो ! बच्चे की आँखों में धूल जो जा रही है। " [30]

इसके बाद मरियम बच्चे को देखकर, उसकी साँस चलती है या नहीं इसका विश्वास कर लेती है। यह सारा स्वप्न है यह सोचकर राहत पाती है और अपने

बच्चे के खातिर सारी रातभर जागती रहती है ।

अपने बच्चे के खातिर उसमें जीने की दुर्दम्य इच्छा होती है और उसीके कारण वह जीती जा रही है वैसे उसका सारा सौंदर्य नष्ट हो गया है और वह केवल हड्डी माँस का एक ढाँचा मात्र रह गई है । इसी बीच मरियम, अशोक के ऑपरेशन की खबर पढ़ती हे । उस ऑपरेशन से उसका पुनर्जन्म और उसे अरुणा का छोड़कर चले जाने की भी बातें मरियम अखबार में पढ़ती है । तब अपनी बुरी अवस्था में भी अशोक के पास वह चली जाती है । अशोक की तबीयत सुधारने लगती है । मरियम के बच्चे को मायादेवी लाती है । अपने बच्चे को सुरक्षितता मिल गई यह देखकर वह अशोक की गोद में अपनी अंतिम साँस लेती है । मरियम ईसाई धर्म की होते हुए भी धर्मांध नहीं है उसमें भारतीय संस्कृति के प्रति आस्था दिखाई देती है । और इसीके परिणाम स्वरूप वह अशोक के साथ एकनिष्ठ रहती है ।

मरियम के इन दो सपनों व्दारा फ्रायड़ के सिध्दान्तों का प्रतिपादन किया हुआ दिखाई देता है । "फ्रायड़ का मत है कि स्त्री प्राय: अपना परिवार, सन्तान, घर, काम–तृप्ति पर अधिक मात्रा में स्वप्न देखा करती है । इसलिए काल्पनिक संसार में सुख प्राप्त करना स्त्री का स्वभाव माना जाता है ।"[31] मरियम अपने बीमार अवस्था के कारण विकल बन गई है और अपने बच्चे के पालन के लिए अपने आपको असमर्थ पाती है । उसके मन में हमेशा बच्चे को लेकर अनेक चिन्ताएँ है । अपने बच्चे के प्रति उसका प्रबल प्रेम फ्रायड़ के अनुसार "ईडिपस–कॉम्प्लेक्स (पुत्र का माँ के प्रति आकर्षण) का अच्छा उदाहरण है ।"[32] उसके सपने में भी अपने बच्चे । उसके लिए अपने आपको हमेशा जागृक एवं उसके सुखद भविष्य की कामना करती है । "पहले स्वप्न में राक्षक उसके चारों ओर की दुष्ट प्रवृत्तियों का प्रतीक है जो उसे नष्ट करना चाहते हैं पर वह जिन्दा रहना चाहती है केवल छोटे अशोक के लिए ।"[33]

दूसरे स्वप्न में भी फ्रायड़ के ही सिध्दान्त का उदाहरण मिलता है । मरियम के मन में अपने बच्चे के प्रति प्रबल प्रेम है । वह हमेशा उसके साथ जीने

के लिए अपने आपको बनाए रखती है अपनी विकल अवस्था के बावजूद भी । "इसलिए उसके होनेवाले कष्टों को खत्म करना चाहती थी । स्वप्न हमेशा विपर्यस्त होते है - मरा हुआ जिंदा तो जिंदा मरा हुआ दिखाई देता है । बच्चे की मृत्यु की कामना होती है तभी उसे मन में भय लगता है इसलिए मरियम घबरा गई थी । इसमें गिरजाघर - धार्मिकता का संकेत है पर आदमी का हरीकेन लालटेन लेकर चलना - दीपक बुझना नहीं जिन्दा-दिली का संकेत है । क्यों कि मृत्यु जीवन की रोशनी बुझाती है । कुदालीवाला, चार फूट का गड्ढ़ा जान आदि प्रतीक मृत्यु के उपरान्त में आ जानेवाली चीजें है । उसमें एक ही अर्थ निकलता है कि "स्वप्न की मृत्यु" मास्टर अशोक को दीर्घायु बनाने की सूचना देते है । " [34]

मरियम मातृत्व भावना से प्रेरित है और अपने प्रियतम के प्रति एकनिष्ट प्रेम भी करती है । अपने प्रियतम की गोद में अंतिम साँस लेती है और अशोक के लिए गहरी विरह-व्यथा छोड़ जाती है । "अशोक का जीवन मृगजल का रूप धारण करके दुःखों से आक्रान्त हो जाता है । कलाकार की जवन-अनुभूति गहरी तो हो जाती हैं, किंतु कितना मूल्य चूकाकर ।"[35] मरियम की मृत्यु से उपन्यास का अंत दुःखपूण् है । इसतरह प्रस्तुत उपन्यास में शेवड़ेजी ने मरियम (ईसाई होते हुए भी) के चरित्रव्दारा भारतीय स्त्री की मातृत्व-भावना प्रेम की निष्ठा आदि गुणों का चित्रण किया है ।

"निशा-गीत" की नायिका "सुशीला" का मनोविज्ञान -

निशा-गीत शेवड़ेजी का एक बहुचर्चित उपन्यास है । अब तक लिखे उपन्यासों में यह एक श्रेष्ठ कृति है । कर्तव्यनिष्ठ डाक्टर तथा नर्स के जीवन पर आधारित यह एक सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक उपन्यास है । इसका कथापन प्रेम के आदर्श पर आधारित है । कथावस्तु मधुर होते हुए भी वेदनापूर्ण है । इसमें समाज की सेवा करने के लिए तत्पर एक प्रेमी-युगुल की कहानी है । प्रूरूष और स्त्री के प्रेम, त्याग और संयम पर यह उपनयास आधारित है । इसमें देह की

वासना नहीं है, किंतु हृदय और आत्मा का गाढ़ अनुराग है। सात्विकता और सुरुचि से पूर्ण यह प्रेम अत्यंत मार्मिक ढंग से व्यक्त किया गया है। सुखान्त होते हुए भी उपन्यास के अंतरंग में करुण धारा की भी प्रतिध्वनि गूँजती है। इस उपन्यास को अपनी सम्मति देते हुए पं. माखनलाल चतुर्वेदी कहते हैं कि –

"पुस्तक प्रारंभ से अंत तक बाँसुरी की एक कसकभरी मीठी तान की भाँति वेदनापूर्ण, किंतु मधुर है जिसकी टीस की सुमालिका भी निर्माल्य नहीं बनती।" [36]

इसतरह यह उपन्यास भाषा, भाव तथा चरित्रचित्रण की दृष्टि से विकसित कृति है। उपन्यास के नायक तथा नायिका आदर्शवादी हैं। उपन्यास की नायिका नर्स सुशीला का मनोविज्ञान इसतरह है –

व्यक्तित्व –

नारी जाति के अनेक स्थायी गुण नर्स सुशीला में हम पाते हैं। उपन्यास का नायक मधुसूदन बंबई के किंग एडवर्ड मेमोरियल हॉस्पीटल में नर्स सुशीला से मिलता है। अन्य स्त्रियों से अलग ऐसा सुशीला का व्यक्तित्व है। डॉ. मधुसूदन (उपन्यास का नायक) के अनुसार, "नर्स सुशीला सौंदर्य की उन बातों को उतना महत्व नहीं देती जिन्हें अन्य सामान्य नारियाँ महत्व देती है जैसे – गुलाब जैसे कपोल, कमल-दल जैसे ओंठ, मृगी जैसे नेत्र, हंस जैसी ग्रीवा इत्यादि। फिर भी उसके चेहरे पर ऐसा विचित्र सा सात्विक भाव था जिसकी छाप तुरंत पड़ती थी।" [37] सुशीला देखने में न सुंदर थी, न कुरूप। रंग गेहूआँ, डील-डौल ऊँचा-पुरा, हाथ-पैर मजबूत, आँखे बड़ी बड़ी। उसके इस बाह्य रूप को देखकर मेड़िकल के छात्रों ने उसे "अम्मा" नाम दे दिया था। वह हमेशा गंभीर रहती थी। वह कम बोलती थी और हँसती भी कम। उम्र चौंतीस-पैंतीस थी। और वह हमेशा शुभ्र साड़ी ही पहनती थी। उसके साथ हाऊस सर्जन तथा दीगर डॉक्टर भी अदब से पेश

आते थे । सुशीला एक हिंदु बालविधवा है इसलिए वह हमेशा अपने को तथा अपने व्यक्तित्त्व को हीन ही समझती है और उसके व्यक्तित्त्व को महत्त्व अब तक किसी के व्दारा मिला भी नहीं था । इसीकारण जब मधुसूदन व्दारा उसे आमंत्रण पत्र मिलता है तो वह फूली नहीं समाती ।

शिक्षा तथा स्वावलंबन -

सुशीला एक अच्छी नर्स है । वह जाति की सारस्वत ब्राम्हण है और उसकी शादी कम उम्र में ही हुई थी । और छः महीने के अंदर पति चल बसे । इसके बाद दस-बारह वर्ष सुशीला वहीं कर्नाटक में ससुर के यहाँ बीताती है । ससुर की मृत्यु के बाद देवर के दुर्व्यवहार के कारण अपनी जमीन बेंचकर माँ को साथ ले वह पूना आती है । सेवा-सदन में भरती होकर मैट्रिक तक शिक्षा लेती है । बाद में बी.पी.एन.ए. का नर्सिंग और मिड्वाइफरी का डिप्लोमा हासिल करके बम्बई के किंग एडवर्ड मेमोरियल हॉस्पीटल में वह नौकरी करने लगती है, जिससे वह अपना तथा माँ का चरितार्थ चला रही थी ।

आदर्श परिचारिका -

हॉस्पिटल में काम करते हुए सुशीला अपना सारा ध्यान रुग्णों की सेवा में लगा देती थी । "वह अपना काम इतनी आस्था और प्रेम से करती कि मरीज़ कृतज्ञता से धन्य हो जाते । उसका दवा पिलाने का, थर्मा-मीटर लगाने का, मलहम-पट्टी बाँधने का तरीका ही कुछ ऐसा स्नेहपूर्ण था कि रोगी निहायत खुश हो उठते और हमेशा उसी की डयूटी की बाट जोहा करते ।" [38] और इसीतरह मरीज की अन्य सेवाएँ भी वह कम बोलते हुए भी अत्यंत आदरता से, स्नेहपूर्णता से करती थी ।

इसके अलावा उसमें नर्स के लिए आवश्यक ऐसी चतुराई भी है । बसोड़न की डिलीवरी के प्रसंग में सुशीला अत्यंत चतुराई से बसोड़न मे जीजिविषा की ज्योती जगाती

है और मृत्यु के करीब गई बसोड़न के प्राण बचाती है ।

अस्पताल के अलावा वह बंबई की "जूनी परेल" की पुरानी बस्ती में तथा कोलीवाड़ा के मजदूरों तथा दरिद्रों की बस्ती में भी दवा देती थी तथा परिचर्या करती थी । उसकी यह कृति समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी को खूब निभाती हुई दिखाई देती है ।

इसीतरह विस्फोट के बाद डॉ॰ मधुसूदन जब अंधा बन जाता है उस वक्त भी वह जी जान से उसकी सेवा करती है । सेवा के इस पथ पर वह डॉ॰ मधुसूदन के साथ अग्रसर रही है और अंत तक उसे निभाती हुई दिखती है ।

कृतज्ञता का भाव –

सुशीला एक विधवा है । हिंदू समाज में विधवाओं का जीवन तो दूभर होता है । उसी तरह का बर्ताव सब सुशीला के साथ करते थे जो एक बड़ी विधवा औरत के साथ किया जाता है । लेकिन जब डॉ॰ मधुसूदन उसके लिए आमंत्रण पत्र भेजकर उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व का सम्मान करता है तब उसकी भावनाएँ उमड़ पड़ती है । डॉक्टर के मन में अपने प्रति आत्मीयता को पाकर वह प्रसन्न हो जाती है । स्वयं डॉक्टर उसके व्यक्तित्व से प्रभावित है और वह यह भी जान गया था कि सुशीला के मन में उसके प्रति आदर है, कौतुक है । डॉक्टर से बिछुड़कर जब वह कर्नाटक जाती है तब उसे पता चला कि वह डॉक्टर से कितनी प्रभावित हो गयी है । फिर भी वह सोचती है कि वह डॉक्टर के योग्य न रूपवती है, न आयु में अनुरूप है । उसने तय किया कि डॉक्टर के अपने प्रति सहृदय व्यवहार में ज्यादा कुछ देखना पागलपन है । और इससे पता चलता है कि उसके मन में डॉक्टर के प्रति कृतज्ञता का भाव सदा ही वर्तमान रहा है ।

डॉक्टर के पिता की मृत्यु के समय वह तीन दिन से उधर से आनेवाली दोनों गाड़ियों पर डॉक्टर के आगमन की प्रतीक्षा में उपस्थित रहती है । और घनघोर वर्षा में वह छाता लेकर डॉक्टर के लिए प्रतीक्षा करती है जिससे उसके कृतज्ञ भावों का पता चलता है । "सुशीला का हृदय कृतज्ञता से शराबोर था।"[39]

संयम एवं त्याग –

सुशीला में संयम एवं त्याग की भावना भी दिखाई देती है । मधुसूदन के प्रेम को जानते हुए भी वह परिस्थिती के सामने झुककर अपनी संयमता का परिचय देती है । इतना ही नहीं तो नौकरी से भी इस्तिफा दें देती है । और उसका यह त्याग सिर्फ मधुसूदन के भवितव्य के लिए ही है । अपने को वह डाक्टर के योग्य नहीं समझती । अपने कारण डॉक्टर का जीवन विवाह के बाद दुःखी हो जाय यह उसे कदापि स्वीकार नहीं है । और इसीकारण वह मधुसूदन को अपनी ओर आकर्षित होते हुए देख अपने आप को औपचारिकता के साँचे में ढ़ाल देती है । जब मधुसूदन नर्स सुशीला से परिणय की याचना करता है तब, "सुशीला उससे प्रेम करती हुई भी नारी स्वभाववश आयु में अंतर देखकर भविष्य से आशंकित होकर उसकी प्रणय-याचना को अस्वीकार कर बैठ़ती है और एक महत्त्वपूर्ण अवसर को हाथ से खो बैठ़ती है । इसके परिणाम का सूक्ष्म विश्लेषण तथा मनोवैज्ञानिक चित्रण लेखक ने कलात्मक ढंग से किया है ।"[40] जैसे –

" सुशीला की आँखें नीची हो गई । उसका सारा शरीर थर-थर काँप रहा था – भावनाओं के आवेग के कारण वह दाँतों-तले अपने ओंठों को दबाकर अपने को सँभालने का प्रयत्न कर रही थी ।"[41]

सुशीला अपने आपको बड़े प्रयास के साथ सक्त बनाती है और अपना निर्णय बताती है । डाक्टर हताश होकर वहाँ से चले जाते है । "अपनी यथार्थ भावनाओं

का गला घोंटकर शीला जो अभिनय कर रही थी, उसका इस वक्त पर्दाफ़ाश हो गया था और वह नारी अपने यथार्थ दयनीय स्वरूप में खड़ी थी ।" [42]

जब वह अपनी सहेली मिस पद्मावती चंद्रा के पास अपना मनोगत व्यक्त करती है तब उसे पता चलता है कि उसे लेकर मधुसूदन के चरित्र को सारा शहर शंकित हो रहा है तब वह गाँव छोड़ने का निर्णय लेती है । सुशीला का यह दिव्य त्याग देखकर पद्मा दंग रह जाती है ।

भारतीय संस्कार का जो मानसिक दबाव सुशीला पर है उसके कारण मधुसूदन और वह स्वयं चाहते हुए भी परिस्थिति के सामने हार जाती है । यह एक तरह से सुशीला की कमजोरी ही है । उसमें विद्रोह करने की हिम्मत ही दिखाई नहीं देती । और अगर वह मधुसूदन को अपनाती तो बाद की दुर्घटनाएँ भी नहीं होती ।

और जब उसे पता चलता है कि डाक्टर मधुसूदन विस्फोट के कारण अंधा बन गया है तब उसकी लाठी बनकर वह फिर उसके पास आ जाती है । और जब वह देखती है कि मधुसूदन अब तक उसे भूला नहीं है तब वह अपने आपको उसके सामने समर्पित करती है ।

हीनता ग्रंथी (Complex)

सेवा एवं त्याग पर आधारित प्रेम में मानव-स्वभाव का उन्नयन करने की अव्दितिय शक्ति है । नर्स सुशीला तथा मधुसूदन के प्यार को शेवड़े ने एक उदात्त रूप दिया है । एक आदर्श रूप में प्रस्तुत किया है । पर उनका प्रेम एक अतृप्त नर और नारी का ही प्रेम है । सुशीला जैसी हिंदु बाल विधवा की स्थिति तो अत्यंत दयनीय है । उसे हरतरफ विधवा होने के कारण व्यक्तित्त्व का आदर तथा प्रेम भी नहीं प्राप्त होता है और जब मधुसूदन उसके व्यक्तित्त्व का सम्मान करता है

तब वह उल्लासित हो उठती है । वह सोचती है कि, "प्रेम हीन विधवा सुशीला हृदयहीन मशीन नहीं", – हृदयवान मानव है, जिसका अस्तित्व है ।"[43] यह भावना उसे संतोष प्रदान करती है । अब तक तो वह अपने जीवन को परिचर्या, पीड़ितों की सेवा इत्यादि शुभ और बड़े बड़े नामों से आभूषित करती थी । लेकिन जब वह एकान्त पाती तो उसे इन शब्दों की ओट में वह प्रेयसी और माता बनने की अदम्य क्षुधा को दबोच देती है । हर हालत में वह जी रही है लेकिन मन में, "एक अतृप्त प्यास सदा दुबकी हुई बैठी रहती, एक शाश्वत दुर्जेय चाह बनी रहती कि उसे ऐसा स्थान मिले, जहाँ वह अपना स्नेह और वात्सल्य दे सके ।"[44] किंतु स्नेह का ऐसा स्थान उसे कहीं नहीं मिला । डाक्टरव्दारा उसे यह सुअवसर प्राप्त होता है लेकिन वह अपने को असुंदर प्रौढ़ः गतयौवना समझकर तथा परिस्थितिवश डाक्टर के अनुरूप समझती नहीं और अपना प्रेम त्याग में बदल देती हैं । अपनी भावनाओं को दबोच लेती है । सुशीला में यह एक तरह की (Complex) हीनता ग्रंथी ही है । फ्राइड् के अनुसार सुशीला अपनी दमित इच्दाओं की पूर्ति करने में घबरा जाती है । क्यों कि भारतीय समाज इस अनमेल संबंध को स्वीकार करेगा कि नही ? यह शंका उसे सताती है । लेकिन ऐसी दमित इच्छा कभी कभी घातक भी बन सकती है । एड्लर का कथन है कि "कायिक हीनता व्यक्ति के जीवन पर बहुत बुरा असर डालती है । यह हीनता किसी भी कारण आ सकती है ।"[45] और हम देखते हैं कि सुशीला भी इस हीनता के कारण अपने को हीन, अयोग्य समझकर मधुसूदनव्दारा प्राप्त इस अमृत कुंभ को ठुकरा देती है । तथा मधुसूदन को भी इस मानसिक परेशानी को उठाना पड़ता है ।

इस तरह सुशीला डॉक्टर के प्यार को ठुकराती है और ट्रेजेड़ी का कारण बनती है । डॉ. गुंजीकरजी के अनुसार, "क्या प्रियतम को अधिक सताने में ही उसे आन्तरिक आनंद प्राप्त होता था ? क्या यह पर-पीड़ारति (Sadism) की वृत्ति नहीं है ? जिसमें पलायन करते हुए एक दूसरे को पीड़ा देने में ही आनंद मिलता है । इस मानसिक प्रक्रिया को फाइड् ने पलायन (Escape) कहा है । "स्वपीड़ा-रति (Masochism) पलायन

की वह क्रिया है जिसमें व्यक्ति अपने को हीन, अयोग्य समझकर अपनी पीड़ा में आनंद लेता है ।"[46]

जिंदगीभर पुरुष के स्नेह से वंचित रहकर सुशीला का हृदय एक आतप्त जमीन की तरह शुष्क और पिपासित हो गया था । स्नेह की वर्षा का अल्प सा जल भी उसे हरा भरा कर देने के लिए काफी था । मधुसूदन का प्यार पाकर दूसरी कोई भी स्त्री उसे अस्वीकार नहीं कर पाती । लेकिन सुशीला भारतीय परंपरा का पालन करनेवाली तथा ईश्वर भीरु, धर्म-प्रिय सारस्वत ब्राम्हणी माँ के छत्र में पलनेवाली होने के कारण अपना मन मसोसकर सामाजिक बंधनों एवं संस्कृति के सामने हार मानती है ।

लेकिन अंत में अपने को मधुसूदन के योग्य समझकर उससे जनम-मरण का नाता जोड़ लेती है । उसे संगीत की रुचि पहले सी थी । संगीतव्दारा वह अपनी भावनाओं पर काबु पा लेती थी । लेकिन बाद में यह संगीत भी उसके अशांत मन पर प्रभाव नंही डाल पाता । अंत में जब वह आश्रय लेती है । और इसतरह अपना प्रेम एक आदर्श प्रेम बनाती है । यह मिलन उसके मतानुसार इसतरह है ,"जहाँ प्रीति की भित्ती मोह या शारिरिक आकर्षण पर होती है वहाँ ऊब होना आवश्यम्भावी है, किंतु जब वह भित्ती हृदय और आत्मा के ममत्व पर होती है और त्याग एवं संयम जिसके रथचक्र है तब वह प्रीति अत्यंत दिव्य एवं पुनीत, शाश्वत और चिरंतन हो उठती है ।"[47] इस तरह अंत में सुशीला मध्यरात्रि में मीराँ का भावपूर्ण भजन गाती हुई दिखाई देती है । भारतीय नारी के समर्पित पत्नी के रूप में सुशीला का व्यक्तित्व पूर्णतः मनोवैज्ञानिक रूप में खिल उठता है । उसके व्यक्तित्व में जहाँ आदर्श दिखाई देता है वहाँ मानवीय रूप में कुछ तृटियाँ भी मिलती है । और इसी कारण वह मानवीय रूप में आदर्श दिखाई देती है ।

" पूर्णिमा " उपन्यास की नायिका "पूर्णिमा" का मनोविज्ञान :

"पूर्णिमा"शेवड़ेजी का एक आधुनिक नारी के जीवन पर लिखा गया उपन्यास है । इस उपन्यास की नायिका "पूर्णिमा" एक स्वच्छंद युवती है । उसे जीवन के सारे आमोद-प्रमोद की ओर लगाव है । अपने सौंदर्य के "अहं" से जीवन में उसे कितनी बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है इसे शेवड़ेजीने अत्यंत मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया है वह इस प्रकार -

व्यक्तित्व -

उपन्यास की नायिका "पूर्णिमा" सुंदर युवती है । पिता बॅरिस्टर जीवनचंद्र पंड़ित की वह इकलौती लड़की है । अपने सुंदर व्यक्तिमत्व पर उसे पूरा भरोसा है । इसलिए वह अपने को विलास जैसे धनी युवक के योग्य समझती है । परंतु यही उसका सौंदर्य उसका घात करता है । विनयकुमार जो उसके प्रेम का प्यासा था, सच्चा प्रेम था उसे बचाने के लिए विलास के बारे में उसे सावधान करता है तब वह क्रोध से उसे ही फटकारती है - "प्रत्येक मनुष्य अपना अपना हित सो समझताही है विलासबाबू ! लोगों को व्यर्थ ही दूसरों का बोझ उठाकर अपनी जिम्मेदारीयाँ बढ़ा लेने की जरूरत नहीं है ।"[48] इस तरह अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व बनाये रखने की हिम्मत पूर्णिमा में दिखाई देती है ।

शिक्षा -

पूर्णिमा कॉलिज की छात्रा है । उसमें अपने निर्णय या भला बुरा सोचने तक की क्षमता है । उसे संगीत में रुचि है । वह उन्मुक्त तथा स्वच्छंद विचारों की है । उसके दो मित्र है । लेकिन इन दो मित्रों में से एक का चुनाव करना उसके लिए द्विधावस्था है । वह योग्य ऐसे विनय के गुण न देखकर विलास जैसे आधुनिक किंतु अयोग्य व्यक्ति को चुनती है । वह सोच समझकर निर्णय लेने में असमर्थ दिखाई देती है । उसे बैड़मिंटन, टेनिस जैसे खेल भी आते हैं ।

अहंभावना –

पूर्णिमा अत्यंत सुंदर है और अपने सौंदर्य का उसे पूरा अभिमान है । "हँसना – खेलना, मौज करना उसे प्रिय लगता था । जीवन में रोना या मुर्हरमी सूरत बनाकर घूमना उसकी फिलासफी नहीं थी ।"[49] इसी कारण वह जहाँ जाती सबका आकर्षण–बिंदु बन जाती है । कॉलिज में भी कई विद्यार्थी उसके प्यार के दीवाने थे । विलास और विनय इन्हीं में से थे । पूर्णिमा के मन में इन दोनों को लेकर व्दंव्द होता है । विनयकुमार से मतभेद होने से वह उसके साथ जाने के बजाय विलास जैसे धनी युवक को अपनाती है । अपने यौनभावों तथा "अहं" के कारण विलास के जाल में फँस जाती है ।

पूर्णिमा की यह अहंभावना है । एड्लर ने कहा है, "सामाजिक संबंध, प्रेम और विवाह इसी त्रिकोण में मनुष्य की शक्ति अग्रसर होती है एवं पारिवारिक संबंध या सामाजिक परिस्थिति पर उसकी विशिष्ट मानसिक स्थिति निर्भर होती है । इस विशेष परिस्थिति के कारण ही मनुष्य की मानसिक स्थिति में उच्चता की भावना, या कायिक हीनता का भावाना का निर्माण होता है ।"[50] पूर्णिमा भी अपने अतिअहं के कारण विलास जैसे युवक के साथ अपना मेल जोल बढ़ाती है और इसके कारण स्वरूप उसे विवाहपूर्व मातृत्त्व, और समाज का व्यंग्य सहना पड़ता है ।

मातृत्त्व भावना –

"पूर्णिमा और विलास के अवैध संबंधों के परिणाम से पूर्णिमा विवाह के पूर्व ही माँ बनती है । विलास उससे विवाह करने से इन्कार करता है । समाज की तीखी व्यंग्योक्ति पूर्णिमा को सहनी पड़ती है । दुनिया उसकी घृणा करने लागती है । स्वयं अनेक कष्टों को सहती है, समाज का तिरस्कार सहती है फिर भी पूर्णिमा भ्रूण–हत्या नहीं करती । बेबी के जन्म पर अपना पश्चात्ताप व्यक्त करती है और विनयकुमार से कहती है, "मुझे लगा कि यह दिन कितना अच्छा होता यदि इस बेबी के पिता आप होते ।"[51] विनयकुमार उस

बच्चीसहित पूर्णिमा को अपनाता है और अपने आदर्श प्रेम को अभंग रखता है । यदि पूर्णिमा को विनयन अपनाता तो पूर्णिमा का जीवन कितना बदतर बन जाता । गलती से हुए पाप को शेवड़ेजी ने क्षमाके योग्य बताया है । अगर ऐसा न होता तो पूर्णिमा का जीवन उसके लिए एक बोझ बन जाता । विनय व्दारा उसे अपनाकर पूर्णिमा के अहं का नाश कराकर शेवड़ेजीने पूर्णिमा के जीवन का यथार्थ चित्र खींचा है ।

पूर्णिमा पहले तो विनयकुमार का अपमान करती है, लेकिन इस घटना के बाद वह बीमार है सुनकर उससे मिलने के लिए भी जाती है । उसके आने पर विनयकुमार भी आश्चर्य-चकित होता है वह उसके बारे में सोचता है कि, "पूर्णिमा सचमुच एक गूढ़ पहेली है । नारी तो हमेशा पुरुषो के लिए एक गूढ़ पहेली ही रही है, लेकिन पूर्णिमा उन सबसे भी बढ़कर उलझी हुई पहेली जान पड़ती है । उसकी यह आत्मीयता किस बात की घोतक है - विनय के प्रति स्नेह की, ममत्व की, या प्रणय की ? "[52]

इसतरह विनयकुमार की परियर्या में वह एकाग्र होकर अपनी भूख प्यास तक भूल जाती है ।

पूर्णिमा एक प्रगतिशील, सुधारप्रिय आधुनिक नारी होते हुए भी उसपर हिंदू स्त्री के जन्म जन्मांतर के संस्कार भी अंकित है । इसका प्रत्यय पिता के साथ शादी की बातचित के समय उसके चहेरे पर के भावों से आता है । अपने पिता द्वारा दिये गए स्वातंत्र्य तथा विश्वास की पूँजी के लिए उनके प्रति पूर्णिमा के मन में कृतज्ञभाव भी रहता है । विलास को अपना सर्वस्व-दान (विवाह पूर्व) करती है लेकिन बाद में उसके अंतर्मन में इसकी कसक रह रहकर आती है ।" उसके और विलास के बीच में कितनी ही गहरी प्रीति क्यों न हो, विवाह के पूर्व इस प्रकार पतित हो जाना उचित नही था । नारी के युगो - युगों के संस्कार उसके अन्दर से बोल रहे थे ।"[53] विलास को अपना सर्वस्व-दान करने के बाद पूर्णिमा अपने आप को दोषी समझकर बहुत पछताती है । दुनिया के सामने अपने आपको मुँह दिखाने के काबिल नहीं समझती ।

लोगोंद्वारा किये गए व्यंग्योक्तियाँ को चूपचाप सहती रहती है । अपने विचारों के भयंकर दाह में वह झुलस रही थी ।, " इसी प्रकार की मानसिक उथल-पुथल में दिन बीतने लगे ।" [54] पर इतना ही होना काफी नही था । विलास और पूर्णिमा दोनों ने गलती की थी लेकिन नियती ने उसकी क्रूर सजा सिर्फ पूर्णिमा को दी । पूर्णिमा को अहसास हुआ कि वह माँ बननेवाली है । इस " नई जानकारी से पूर्णिमा की हालत अत्यंत दयनीय और बेबस कर दी । उसे अपने शरीर में ऐसे व्यक्ति के जीवजन्तु वहन करना है जिससे वह घृणा करती है ।" [55] इस परिस्थिति की भयानकता ने पूर्णिमा को अत्यंत विकल बना दिया । उसकी यह स्थिति विनयकुमार वर्णित करता है - " कहाँ वह सुन्दर, क्रीड़ा-प्रिय , कलाकार रमणी , जो संसार में एक साम्राज्ञी की तरह शान से विचरण करती थी और कहाँ यह पराजित, आहत, अपमानित एवं तिरस्कृत नारी ।"[56] विनयकुमार द्वारा उसे सांत्त्वना दिलानेवाला पत्र मिलता है और अतीव वेदना और असहायता की भावना से ग्रस्त पूर्णिमा में बुध्दि और आत्म-विश्वास का प्रादुर्भाव हुआ । और उसकी बल पर वह अपने बेबी को जन्म देती है । विनय द्वारा उसे उसकी बेबीसहित स्वीकारना आदर्श की चरमसीमा है । कुछ भी हो विनय द्वारा ऐसी स्त्री को अपनाकर, शेवड़ेजी ने (पूर्णिमा) नारी की ओर सहानुभूति प्रदर्शित की है ।

"मंगला" उपन्यास की नायिका "मंगला" का मनोविज्ञान शेवड़ेजी का "मंगला" उपन्यास अत्यंत कलापूर्ण, मर्मस्पर्शी एवं रोचक है प्रस्तुत उपन्यास में एक अंधे संगीतज्ञ के जीवन पर आधारित रोचक एवं प्रेरणादायी कथा है । इसे "नेत्रहीनों की गीता " कहकर गौरवित किया है । मंगला उपन्यास की कथा पूर्ण रूप से साहित्यिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक रूप में प्रस्तुत की गई हैं । पात्रों और प्रसंगो का विशेष विस्तार इस उपन्यास में नहीं है । संक्षिप्त कथावस्तु एवं व्यवस्थित शैली इसकी विशेषता है । "विशुध्द कला, कथा - शिल्प एवं रोचकता की दृष्टि से शायद यह उनका सर्वश्रेष्ठ

उपन्यास हो – अत्यंत कलात्मक ढंग से प्रस्तुत की गई प्रेम, संगीत और जीवन पर आधारित इस कहानी पर फिल्म भी बन रही है ।"[57]

उपन्यास की नायिका मंगला का अंधा पति उसके सर्वांग सौंदर्य को देख नही पाता परिणामतः जीवन में एक अतृप्ति रह जाती है और इसीसे उपन्यास की नायिका "मंगला" के जीवन में ट्रेजेड़ी आ जाती है जिसे शेवड़ेजी ने सुंदर मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया है ।

व्यक्तित्व :

"मंगला" उपन्यास का नायक सदानंद एक अंध व्यक्ति है । उसकी पत्नी के रूप में "मंगला" को चित्रित किया है । मंगला लालगाँव के मिडिल स्कूल के प्रधानाध्यापक आचार्य शंकरदेवशास्त्री की पुत्री थी । वह देखने में सुंदर नहीं है तो असुंदर भी नहीं है । "गेहूँ आँ रंग है, बड़ी – बड़ी आँखें हैं ।" [58] मंगला अपने आपको सजने – सँवारने का ढंग भी जानती है । अपने शरीर पर खुलकर दिखनेवाले रंगों के वस्त्र वह पहनती है जैसी – " सुंदर मोतिया रंग की साड़ी पहनी , बालों को आकर्षक ढंग से सँवारा, गालोंपर गुलाबी पाउड़र का हाथ फेरा, कानों के आकर्षक कर्ण – फूलों को ठीक – ठाक करके उसने आइनें में देखा । अपना व्यसवस्थित चेहरा और शुभ्र दाँत देखकर उसे आनंद हुआ ।"[59] उसकी उम्र तेईस – चोबीस की थी । उसके सौंदर्य में पूर्णतः विकास हुआ था । उसकी विशाल स्वप्निल आँखों में एक विचित्र प्रकार का आकर्षण था । इसप्रकार आकर्षक व्यक्तित्त्व पाकर भी मंगल ग्रह के कारण उसका विवाह सदानंद जैसे अंधे से हो गया है । अपने सौंदर्य की प्रशंसा सुनना उसे अच्छा लगता है । चंद्रकान्त उसके सौंदर्य की तारीफ करता है "तुम्हारी विशाल स्वप्नमयी आँखों में जो मोहकता है, वह मैंने अबतक किसी नारी में नही देखी । तुम्हारा यह आकर्षक चेहरा, गुलाब की कलियों की तरह ओठ,शुभ्र कमनीय दंत – पंक्ति, यह हंस की तरह ग्रीवा और यह स्वस्थ व्यक्तित्त्व सचमुच मंगला,

UNIV

तुम तो एक राजकुमार से विवाह करने की योग्यता रखती हो ।" [60] इसतरह अत्यंत सुंदर और आकर्षक व्यक्तित्व मंगला ने पाया है ।

शिक्षा :

मंगला को उसके पिताजी ने घर में ही मैट्रिक तक पढ़ाया है, पर परीक्षा में नहीं बिठाया । इसतरह मंगला की शिक्षा अधूरी है जिससे उसे अपने पाँवों पर खड़े होने का कोई मौका नहीं मिलता । और इसीकारण चंद्रकान्त के साथ भाग जाने के बाद पतिता बनने पर भी सदानंद के पास उसे फिर लाचार रूप में आना पड़ता है । मंगला किताबें पढ़ती थी, उपन्यास पढ़ती थी । और इसी कारण वह प्रीति के मीठे सपने देखा करती थी । उसे संगीत का उतना शौक नहीं था । कभी गुनगुना करती थी । पति के घर में संगीत सीखने का अच्छा मौका उसे मिला था फिर भी उसने इस मौके का लाभ नहीं उठाया । परंतु यह संगीत उसके दिल पर अपनी अमीट छाप छोड़ ही गया था चंद्रकान्त के साथ बंबई भाग जाने के बाद जब वह अकेलापन महसूस करती है तब इसी संगीत से वह अपना मन बहलाना चाहती है ।

तिरस्कृत नारी :

मंगला सुंदर नारी होते हुए भी उसकी पत्रिका में सप्तम स्थान में मंगल ग्रह होने के कारण समाज में हमेशा तिरस्कृत ही रही है । मंगला लालगाँव जैसे देहात में थी और उसके दुर्भाग्य पर घर-घर में चर्चा होती तथा समाज की स्त्रियाँ भी उसे ताने सुनाती थी । मंगला के पिता वह बारह वर्ष की होते ही कन्या-दान का स्वप्न देखने लगे थे । किंतु अनेक वर्षों से जी तोड़ कोशिश करने पर भी मंगला की शादी कहीं तय नहीं कर पाये थे क्यों कि उसकी पत्रिका में मंगल सप्तम स्थान में था । माता पिता को अपनी विवाह की चिन्ता में दग्ध होते हुए देख उसे बहुत क्लेश होता था । "सब उसकी

तरफ तो इसी तरह उँगलियाँ बताते जैसे उसने कोई जघन्य पाप किया हो ।"[61]
इसतरह अपने पिता के घर तो कुंडली के अनिष्ट मंगल ग्रह के कारण वह हमेशा तिरस्कृत रही । बचपन में उसने माँ-बाप का प्रेम तो पाया पर बाद में चलकर ऐसा ही लगा कि वह एक बला है, बोझ है उत्तरदायित्व है जिसके भार के नीचे जीवन दूभर हो गया है । इस के सामने उसके आभूषणों या कपड़े की तरफ तथा उसकी आँखों या दाँतों का सौंदर्य देखने के लिए कोई क्यों उत्सुक रहता ?

पति के घर में ऐसी स्थिति नहीं थी । किंतु उसकी नेत्रहीनता के कारण मंगला उससे भी अपने व्यक्तित्त्व का योग्य सम्मान नहीं पा सकी ।

चंद्रकान्त के साथ भाग जाने के बाद तो वह समाज से और भी तिरस्कृत हो गई । पं. सदानंद के संगीत समारोह में दो स्त्रियों के वार्तालाप में यह बात दिखाई देती है एक स्त्री कहती है कि, "औरत छोड़ कर भाग गई ? हाय राम, ऐसी कौन सी कल मुँही स्त्री है जो ऐसे अद्‌भुत कलाकार पति को छोड़कर भाग गई ? कोई कुलच्छनी बदचलन औरत होगी ।"[62]

निराशा और विफलता की भावना -

विवाहपूर्व मंगला को समाजव्दारा उपेक्षिता ही ठहराया गया । उसकी पत्रिका के कारण शादी तय होना मुश्किल हो गया यह देखकर वह अपने पिता के घर हमेशा एक बोझ या चिन्ता का कारण ही बन गई थी । स्वयं मंगला भी कई बार सोचती कि सचमुच कभी उसका विवाह हो पाएगा या नहीं ? और इसी कारण असके मन में घोर निराशा और विफलता की भावना पैदा होती । विधि - लिखित दुर्भाग्य के लिए सभी मंगला को ही दोषी ठहराते थे । मंगला इन लोकापवादों और प्रवादों को नहीं मानती थी फिर भी वह उनकी काँटों जैसी चुभन को अनुभव करती थी । लेकिन आत्महत्या कायरता है ऐसा सोचकर वह चूप बैठती है और अपने माता - पिता को इस दुःसह्य

भार से मुक्त करने के लिए वह अब किसी भी व्यक्ति से शादी के लिए तैयार हो गई थी । और सदानंद जैसे अंधे से शादी तय की जाती है तब भी उसे कुछ दिलासा ही मिलता है । **विद्रोही भावना** – पिता की चिन्ता तथा पड़ोसियों के ताने समाज के व्यंग्योक्ति से मंगला तंग आ चुकी थी । उसे लगता कि प्रारब्ध उसके साथ छल कर रहा है । " नारी के जीवन की परपूर्ति के जो सर्व-साधारण मार्ग हैं वह उसके लिए बंद हैं । नारी सुलभ प्रीति की ऊर्मियाँ उसके हृदय में उठती थी ।"[63] लेकिन उसके सपने सपने ही बने रहें । वस्तु – जगत् में वह उपेक्षा ही पा रही थी । इसीके कारण उसके हृदय में भी एक प्रकार की कठिनता, जड़ता आ गई थी । भाग्य उसे धोखा दे रहा है, उसे जो मिलना चाहिए था उससे जबर्दस्ती वंचित रख रहा है ऐसी भावना उसके दिल में पैदा हुई जिसके कारण कुछ कटुता भी उसमें आ गई । कुछ बेपरवाह, कुछ बेदरकारी, कुछ विद्रोही वृत्ति ।

इसलिए विवाह तय हो जाने के बाद भी मंगला (इस अनमेल विवाह के लिए) उल्लासित नहीं हुई । लेकिन विवाह के बाद उसमें विद्रोह भावना निर्माण हुई और इसीकारण वह चंद्रकान्त के साथ मेल जोल बढ़ाती है ।

अहं भावना (Complex)

मंगला को सुंदर होते हुए भी सदानंद जैसे अंधा व्यक्ति से शादी करने के लिए समाज द्वारा मजबूर कर दिया जाता है । विवाह के पूर्व मंगला किसी से भी शादी के लिए तैयार थी लेकिन जब यह अंधा सदानंद उसके पल्ले में पड़ता है और उसके द्वारा अपने सौंदर्य की तारीफ न सुनकर वह सदानंद से रूष्ट हो जाती है और उसके मन में " भाग्य के प्रति, अपने माता – पिता के प्रति, ज्योतिषके प्रति कटुता तथा विद्रोह भावना, प्रतिस्पर्धा उत्पन्न हुई ।"[64] और इसीवक्त चंद्रकान्त जैसे उद्दाम प्रबल आकर्षित व्यक्तितवाला युवक उसके सामने आता है वह भी मंगला में सौंदर्य देखकर

उसकी ओर आकर्षित होता है । मंगला आपना सर्वस्व धोखे में डालकर इस अहं भावना से प्रेरित होकर चंद्रकांत की ओर आकर्षित होती है ।

फ्रायड ने मन को तीन भागों में विभाजित किया है (Id) - इद् (Ego) इगो - इदम् और (Super-Ego) अति अहम् इन तीन विभागों में से मंगला पर अहं भावना का प्रभाव पड़ता है और फ्रायड के अनुसार, "अहम् स्वयं सर्वशक्तिमान नहीं है, वह इदम् पर ही निर्भर रहता है ।"[65] चेतन मन इगो (Ego) इदम में नीचे दबी हुई दमित इच्छा एवं कुंठा को बार बार नियंत्रित करता है ।

"ये दबी पड़ी इच्छाएँ सक्रिय होने का प्रयत्न समय - समय पर करने लगती हैं ।, सुसंस्कृत समाज के भय से बुरी वासना प्रकट करना असभ्यता का लक्षण माना जाता है । वासना अवचेतन में भले ही दब गई हो, पर वह पूर्ण रूप से नष्ट नही होती । वह अज्ञात रूप से छिपी रहती है और तनिक - सा मौका पाते ही छद्म रूप में बाहर निकल पड़ती है ।" [66] मंगला का चंद्रसकान्त की ओर आकर्षित होना इसीप्रकार का है और वह अपनी इच्छा का बार बार दमन होते देख मौका पाकर चंद्रकान्त के साथ बंबई भाग जाकर अपनी इच्छा को पूर्ण करने का प्रयत्न करती है । मंगला को अपने सौंदर्य का अभिमान था वह अपने सौंदर्य की स्तुति तथा अपना व्यक्ति सम्मान चाहती थी जैसे -

" मंगला की आत्मा इस सबके लिए बुभुक्षित थी , लालायित थी, उसका रोम - रोम इसके लिए उत्सुक था -

पर यह बुभुक्षा, यह निगूढ़ पिपासा, जिसका उसे कभी अनुभव नहीं मिला, पर जिसकी उसे न जाने क्यों अपेक्षा थी, शांत नहीं हो पाई और सब

कुछ होते हुए भी वह अपने आप में कुछ न्यूनता, कुछ अतृप्ति अनुभव कर रही थी ।"[67] इसीतरह का अनुभव जब उसे बार – बार आता है तब सदानंद की और से वह निराशा अनुभव करती है और इसके बराबर उल्टा चंद्रकान्त में अपने प्रति तीव्र आकर्षण अनुभव करती है और इसी विद्रोह की भावना से वह चंद्रकान्त के साथ भाग जाने के लिए तैयार हो जाती है ।

पश्चात्ताप दग्ध मंगला :

मंगला चंद्रकान्त के साथ बंबई आती है वहाँ कुछ दिन सुख से बीताती है लेकिन चंद्रकान्त जब अपने काम में लग जाता है तब मंगला अकेलापन महसूस करने लगती है । अकेनेपन में वह संगीत का सहारा लेती है । जब पं. सदानंद के गायन का जलसा और उसका सम्मान समारोह रहा था तब तो वह अपने पर काबु नहीं पाती । वह अत्यंत पश्चाताप दग्ध होती है –

"आओ, बरसो मेरे नयन – घन ! खूब बरसो ! मेरे जीवन में तुम इतनी बड़ी बाढ़ ला दो , ताकि मेरा सारा पाप और कलंक धुल सके तो धुल जाय । मैं तुम्हारा उपकार कभी न भूलूँगी – ।"[68]

इस पश्चात्ताप के बाद मंगला बहुत सोचकर यह निर्णय करती है कि अब वह चंद्रकान्त के साथ शादी नहीं करेगी अपनी पश्चात्ताप भावना वह एक पत्रद्वारा मृणाल के सामने व्यक्त करती है और साथ ही साथ यह भी कबूल कर लेती है कि अपने में से वह पति का व्यक्तित्त्व नही निकाल पा सकी हैं । "अचानक कल रात्रि को ही मैंने अनुभव किया कि मेरे पति का व्यक्तित्त्व मेरे रोम – रोम में व्याप्त है, मैं उनसे कितनी भी दूर क्यों न भाग जाऊँ, मैं उन्हें कदापि नहीं छोड़ सकती ।"[69]

इस पत्र को मृणालिनी व्दारा सदानन्द सुनता है और मंगला को क्षमा कर देता है और इस तरह मंगला फिर सदानंद के पास आती है और अपने पाप का प्रायश्चित्त लेने के लिए सादगी से जीवन बीताना शुरू करती है । अपने सादगीपूर्ण, सौहार्द, स्नेह से वह पं.सदानंद के दिल में मंगला फिर अपना स्थान बना लेती है । इसतरह बिछड़े हुए मंगला और सदानंद का फिर से मिलाप हो जाता है । मंगला के हृदय-परिवर्तन से पुनः घर की स्थापना हो जाती है ।

इसप्रकार अपने "अहं" के कारण मंगला चंद्रकान्त के आकर्षण से पतित होती है। लेकिन गाँधीवादी हृदय-परिवर्तन से सदानंद से क्षमा प्राप्त कर मंगला फिर से मार्गस्थ होती है ।

"अधूरा सपना" की नायिका "सुहासिनी" का मनोविज्ञान –

"अधूरा सपना" शेवड़ेजी का एक लघु उपन्यास है । इसकी कथावस्तु रोमाँटिक तथा मनोवैज्ञानिक है । "व्यक्तिगत प्रेम और राष्ट्रप्रेम, मनोवैज्ञानिकता और हिंदु आदर्श का समन्वय "[70] प्रस्तुत उपन्यास में दिखाई देता है । उपन्यास की नायिका "सुहासिनी" में अहं भावना है जिससे कॉलेज का सहपाठी गिरीश (उपन्यास का नायक) जैसे बुध्दिमान लड़के को उससे प्यार से संन्यस्त होना पड़ता है । स्वयं सुहासिनी भी अपने जीवन में कितनी निराश बनती है इसे शेवड़ेजी ने मनोवैज्ञानिक ढ़ंग से चित्रित किया है ।

व्यक्तित्व –

सुहासिनी का व्यक्तित्व अत्यंत लुभावना है । उसका लावण्य अवर्णनीय है । "कुंदन जैसा रंग, उँची छ़रहरी देह-लता, बड़ी-बड़ी काली आँखे, और मोतियों की लड़ी की तरह शुभ्र दंतपंक्ति, जब हँसती थी तो लगता था कि नक्षत्र हँस रहे है ।"[71] इसतरह सुंदर सुहासिनी सदा चपल और चंचल रहती थी । उसके सौंदर्य में बिजली

जैसी प्रखरता और तितली जैसी चंचलता थी । कॉलेज के कई लड़के उसके प्रेम के लिए दीवाने थे । कॉलेज की वह "ब्यूटी क्वीन" थी । "उसमें गजब की सेक्स अपील थी ।"[72]

सुहासिनी के पिता ब्रिटीश बैंक के मैनेजर थे । अच्छी आमदनी थी । उनकी इकलौती बेटी थी सुहासिनी, जो बचपन में माँ के प्यार को खो बैठी थी । सुहासिनी, की इस कोमल भावना को पिताजी जानते थे इसलिए वह उसपर कोई ज्यादती नहीं करते थे, कोई रोक-टोक नहीं लगा सकते थे । इस कारण सुहासिनी में अपने आप निर्णय लेने की तथा एक तरह की स्वयंभावना आ गई थी । वह अपने सौंदर्य को पूरी तरह ज्ञात करती थी इसलिए हमेशा उसे बनाए रखती थी । दिन में अनेक बार वस्त्र बदलती थी । साज-शृंगार के विभिन्न साधन अपनाती थी । अपनें कुदरती सौंदर्य में आधुनिक प्रसाधनों से अभिवृध्दि करना वह वखूबी से जानती है । उसके रहन-सहन का ढंग उच्चस्तार का था । इसतरह सुहासिनी का व्यक्तित्व प्राकृतिक सौंदर्य से लुभावना और पिता के वैभव से रुबाबदार बना है ।

शिक्षा -

सुहासिनी एक बुध्दिमान लड़की है । वह इंटर पास करके थर्ड इयर में पढ़ने के लिए गवर्नमेन्ट कॉलेज में आई है । पढ़ने-लिखने की अपेक्षा उसे खेल-कूद, संगीत-अभिनय, सभा-संमेलनों में अधिक रुचि थी । वह टेनिस और बैड़मिंटन भी खेलती थी । कॉलेज के वाद-विवाद में भी हिस्सा लेती । नाटक की नायिका बनकर कॉलेज का नाटक यशस्वी बनाती ।

उसे गाने का शौक है । उसके आवज में भी "एक तरह का कंपन था, सोज था जो दिल को गहराई तक स्पर्श कर लेता था । उसकी आवाज में आर्तता थी जिसका श्रोताओं पर गहरा असर पड़ता था ।"[73] उसके सुरीले स्वागत गीत से ही कॉलेज के समारोहों का प्रारंभ होता । सौंदर्य-प्रतियोगिता में भी वह जीत जाती थी । "सुहासिनी अपनी शक्ति और प्रभाव को जानती थी इसीलिए उसे कुछ

अहंकार भी हो गया था ।"[74] इसी कारण है कि गिरीश जब उसके कुछ मुद्दों का खंड़न करता है तब उसके "अहं" को धक्का पहुँचता है । आज तक के बर्ताव में उसने पुरूष से हमेशा प्रशंसा, खुशामद ही पाई थी । "उसे अहंकार था कि किसी भी पुरूष को वह अपनी मोहिनी की परिधि में ला सकती है ।"[75] और इसीकारण गिरीश व्दारा किए गए अपमान का बदला लेनी की उसमें तीव्र इच्छा निश्चय रूप में बन गई ।

अभिनय क्षमता –

सुहासिनी में अभिनय के सुप्त गुण भी थे । कॉलेज के असेम्बली हॉल में उसका एक स्वतंत्र, शानदार कार्यक्रम होता है जिसमें उसके इस गुण का प्रत्यय आता है ।

उस कार्यक्रम के तीन स्तर थे – उर्वशी नृत्य, मूक अभिनय, और अंत में भजन । उर्वशी नृत्य में उसने अपनी सारी श्रृंगारिकता उँड़ेल दी थी । उस नृत्य के लिए उसमें आवश्यक श्रृंगार – भडकीला, उन्मादक, मोहक, ऐसा रूप था जो उसपर एक उन्मादिनी उर्वशी का रूप दिखाने में सहायक होता था ।

मूक अभिनय में अन्धी भिखारिन की अदा भी उसने जी जान लगाकर की । और अंत में वह मीराँबाई का भजन प्रस्तुत करती है । स्टेज पर प्रत्यक्ष मीराँ का आभास उसके रूप में होता है । सादगी से, आभूषण विरहीत मीराँ जैसा रूप लेकर वह अपने सुरीले आवाज में भजन पेश करती है । "सुहासिनी की आवाज में आर्तता थी, लोच थी, एक विचित्र प्रकार का आकर्षण था जो श्रोताओं के ह्रदय को तुरंत स्पर्श कर लेता था और आज उसने विरह–वेदना की समस्त करूणा और क्रन्दन उसमें भर दिया था ।"[76] ऐसे गान में समस्त श्रोताएँ अपनी सुध–बुध खो जाते है । गिरीश भी इस आर्त भजन से भाव–विभोर हो जाता है । और सुहासिनी को हार्दिक बधाईयाँ देता है । सुहासिनी अपने अहं के सामने गिरीश को इस कार्यक्रम के व्दारा जीत लेती है ।

सुहासिनी के इस अभिनय के अंतर्गत बदला लेने की सुप्त इच्छा ही कार्यप्रवण दिखती है । और गिरीश से प्रशंसा पाकर उस अहंभावना को और भी पुष्टि मिलती है ।

प्रेम –

सुहासिनी के प्रेम के लिए कॉलिज के कितने युवक उसकी ओर आकर्षित हो चुके थे । कई तोकेवल रोमान्स के दिवाने थे । ऐसे सड़क छाप दीवानों का वह तिरस्कार करती है ।

सुहासिनी के कार्यक्रम के बाद गिरीश भी सुहासिनी को अपना दिल दे बैठता है । "पर सुहासिनी ? उसकी भावनाओं का क्या हाल था ? क्या वह गिरीश को प्रतिदान में वह दे सकी जो उसने उससे पाया था ? "[77] सुहासिनी शायद गिरीश को और सताने के लिए रामलाल फोटोग्राफर के साथ अपना मेल-जोल बढ़ाती है । गिरीश संयमी किंतु स्वाभिमानी होने के कारण अपने आप सुहासिनी से दूर हो जाता है लेकिन दिल से उसे दूर नहीं कर सकता । और सुहासिनी भी अंत तक गिरीश की मूर्ति अपने ह्रदय सिंहासन पर अधिष्ठित ही रखती है ।

रामलाल से उसका प्यार एक आकर्षण मात्र है । रामलाल के कारण ("अभिसारिका" शीर्षक फोटो से) उसके सौंदर्य का डंका बजता है, ऐसा सोचकर वह उसकी ओर कृतज्ञता से देखने लगती है । "रामलाल के व्यक्तित्त्व में उसे पौरूष का, ताकद का आभास मिला । जैसे इस आदमी में जबर्दस्त आत्मविश्वास हो, अपने कदमोंपर पूरा-पूरा भरोसा । सुहासिनी का वर्ण एकदम गोरा था, रामलाल का काला । और शायद विरोधी तत्वों के बीच ही आकर्षण भी सबसे अधिक रहता है । इसलिए सुहासिनी को रामलाल के प्रति खींचाव हुआ ।

विद्यार्थियों ने उन्हें देखकर, "ब्यूटी एण्ड दी बीस्ट" कहा ।"[78]

सुहासिनी को रामलाल के इस पौरूष और शक्ति का कुछ भयासक्त किंतु प्रबल आकर्षण था। अत्यंत विपदावस्था में भी, अंत में गिरीश की मुलाकात में भी वह रामलाल को ही अपना सबकुछ मानकर जीती है ।

अहंभावना –

सुहासिनी कॉलेज में गिरीश व्दारा वाद-विवाद प्रतियोगिता में हार जाती है । तब उसके "अहं" पर आघात होता है । उसके मन में गिरीश के प्रति घृणा तथा तिरस्कार तथा प्रतिशोध की भावना जागृत होती है । उसका बदला कैसे ले ? अपने अपमान का बदला लेने के लिए वह मार्ग ढूँढ़ती रही । यह सुहासिनी की प्रवृति (Thantos) नामक सिध्दान्त का प्रतिपादन करती है । जिसमें व्यकित के अंदर प्रतिस्पर्धा की भावना, दूसरों पर विजय प्राप्त करने की प्रवृत्तियाँ होती है । यह भावना स्वयं को अथवा दूसरों को पीड़ित करने में अथवा दूसरे के हाथ से पीड़ित होने में मानव को प्रवृत्त करती है ।" [79]

गिरीशव्दारा अपने मुद्दों का किया गया खंडन सुहासिनी को अपमानास्पद लगता है । अपने अपमान का बदला लेकर गिरीश को अपने सामने झुकाती है । समारोह में पेश किये गए कार्यक्रमों पर गिरीश व्दारा स्तुतिसमनों का वर्षाव पाती है और साथ ही साथ गिरीश का अपनी ओर आकर्षण भी देख लेती है । वह गिरीश के आकर्षण को प्रोत्साहन नहीं देती बल्कि रामलाल के प्यार में कैद हो जाती हे । गिरीश इससे निराश होकर संन्यस्त जीवन स्वीकारता है । और स्वयं सुहासिनी रामलाल जैसे "क्रूर, भयंकर, बीस्ट, अनिमल"[80] के साथ दुःखद जीवन बीताती है ।

गिरीश से प्रशंसा पाकर सुहासिनी का "अहं" संतुष्ट होता है । गिरीश का आकर्षण देखकर सुहासिनी के "अहं" को और भी अधिक चेतना मिलती है । वह गिरीश को और भी झुकाने के लिए, अब दाँव अपने हाथ में है यह देखकर उसका "अहं" और अधिक भड़कीला बन जाता है । इसवक्त सुहासिनी में "श्रेष्ठता ग्रंथी का भाव

(Superiority Complex) दिखाई देता है । जिससे ग्रस्त होकर वह हीन मार्ग पर जा रही थी । उसकी ID प्राकृतिक स्वत्व EGO से संघर्ष करते हुए, स्थिर न होकर, उसे पार कर के अधिक श्रेष्ठ बनने की आकांक्षा करता है ।" [81] गिरीश को मानो चुनौती देने के लिए रामलाल जैसे असामाजिक व्यक्ति से शादी करती है । उसका खयाल है कि गिरीश से भी हीन पुरूष के साथ रहकर भी मैं तृप्त बन सकूंगी और ऊपर उठने की कोशिश करूँगी ।

परंतु रामलाल से उसके मन की तृप्ति कभी नहीं हो पाती । बंबई में अत्यंत दीन अवस्था में पाँच बच्चों का भार सँभालते हुए जी रही है । अपनी दयनीयता का, आर्थिकता का एक मात्र सहारा रह जाता है - संगीत । रेड़ियो पर संगीत के कार्यक्रम पेश कर कुछ आमदनी करती है । गिरीश के सामने भी अपने दैन्य का वह उद्घाटन नहीं करती बल्कि रामलाल के अदम्य इच्छाशक्ति का सुप्त गुणगौरव ही करती है और अपने "अहं" को कायम टिकाती रहती है । गिरीश को न पाकर उसके मन में कुछ पछतावा भी है लेकिन उसे वह प्रगट नहीं करती क्योंकि यह व्यक्त करना याने झुकना, गिरीश के सामने झुकना ऐसा वह सोचती है ।

गिरीश से अंतिम मुलाकात में सुहासिनी कबूल करती है कि वह उसे कभी भूल नहीं सकी । अपने आवेग को वह संयमित नहीं करती और कहती है, "नाराज मत हो गिरीश ! काश, तुम नारी का हृदय समझ पाते । वह जिसे चाहती है पर पा नहीं सकती, उसे अगले जनम में भी पा सके इसके लिए भी तपस्या करती रहती है ।" [82] इसतरह अपने "अहं" के कारण अत्यंत स्वाभिमानी सुहासिनी अंत में गिरीश के सामने हार जाती है ।

"इंद्रधनुष" की नायिका "वीणा" का मनोविज्ञान -

शेवड़ेजी का दाम्पत्य जीवन पर आधारित मनोवैज्ञानिक उपन्यास है "इंद्रधनुष" । गृहस्थ जीवन के विभिन्न रंगों का तथा स्त्री-पुरूष संबंध और उससे

निर्मित संघर्षों का चित्रण "इंद्रधनुष" में किया गया है । आधुनिक काल का यथार्थवादी चित्रण "इंद्रधनुष" में हुआ है । शेवड़ेजी का कहना है कि, "पारिवारिक जीवन छिन्न – भिन्न होना चाहता है, और जीवन की अराजक शक्तियाँ उसी ओर छा जाना चाहती है । पर जो जीवन के साथ किसी भी प्रकार का समझौता करना नहीं चाहते, जीवन के तत्त्व और नैसर्गिक नियमों को ही इन्कार करते हैं, अनके साथ जीवन भी क्यों कोई मुहब्बत बतायें ? " [83] इसप्रकार शेवड़ेजी दाम्पत्य जीवन में समझौते का महत्त्व बताते है और साथ ही शैक्षणिक क्षेत्र में होनेवाले –हास का भी उद्घाटन करते है । प्रस्तुत उपन्यास में "भगवतीचरण वर्मा के "चित्रलेखा" उपन्यास के समान पाप–पुण्य की व्याख्या की गई है । और बताया गया है कि, "परिस्थितीवश कोई पाप करता है तो उसे उत्तरदायी नहीं मानना चहिए ।" [84] मानव का महत्त्व शेवड़ेजी हमेशा प्रस्तुत करते है । पाप और पुण्य के संघर्ष में भी उन्होंने मानव की भव्यता और उदात्तता का ही चित्रण किया है । और उनका यह दृष्टिकोण विधायक और स्वस्थ, सात्त्विक है । इसी दृष्टि से उन्होंने प्रस्तुत उपन्यास की नायिका "वीणा" का चित्रण किया है ।

व्यक्तित्त्व –

उपन्यास के नायक डा.ज्ञानशंकर एक फिलॉसाफर है, उनकी पत्नी के रूप में "वीणा" को चित्रित किया गया है । डॉ. ज्ञानशंकर की वह "पेट" छात्रा थी । वीणा डा.ज्ञानशंकर की पढ़ाने की शैली और वक्तृत्व से प्रभावित थी और वह उनके प्रति आदर की भावना रखती थी । आदर ने धीरे धीरे प्रेम का स्वरूप लिया और वह उनसे (डा.ज्ञानशंकर) शादी भी कर लेती है । वैसे भी वह सात बहनों में से एक थी इसलिए उसके व्यक्तित्त्व का घर में ठीक से सम्मान होना मुश्किल ही था और इसलिए उसके माता–पिता भी इस अनमेल विवाह पर एतराज नहीं करते । अनमेल विवाह इसलिए कि डा.ज्ञानशंकर की आयु विवाह के समय पैंतीस की और वीणा बीस की थी । बल्कि माता–पिता ने स्वयं वीणा के मन में यह प्रेम–भाव पैदा किया कहा

जाय तो गलत नहीं होगा । क्यों कि, " वीणा अपने मन के विचारों को और ह्रदय की भावनाओं को ठीक से स्थिर भी नही कर पाई थी कि उन्होंने (माता-पिता) फतवा दे ही डाला कि दोनों का प्रेम है । " [85] इसतरह पतिव्दारा प्राप्त कीमत और अपने अस्तित्त्व का सम्मान पाकर वह खुश हुई और जिस पुरूष के कारण उसे यह प्राप्त हुआ उसके प्रति वीणा के मन में हमेशा कृतज्ञता तथा आदर के भाव रहते थे ।

शिक्षा एवं रुचि –

वीणा एक सुशिक्षित नारी है । वह डा.ज्ञानशंकर के समीप शिक्षा के व्दारा ही आई है । जब भद्रपुर विश्वविधालय में फिलासॉफी के लेक्चरर डा.ज्ञानशंकर थे तब वह उनकी "पेट" छात्रा रही है । इसीसे मालुम हो जाता है कि वह अशिक्षित नहीं बल्कि फिलॉसाफी जैसे विषय में रुचि रखनेवाली होशियार विधार्थिनी है । उसे पढ़ने का शौक है । कपड़े, आभूषणों का भी शौक उसे है । इसीकारण भद्रपुर से बंबई में उसका जीवन अधिक सुकर होगा ऐसा उसे लगता है — "बंबई में वीणा ने अधिक उत्साह अनुभव किया इसमें शक नहीं । वह समुद्र-तट की सैर, सिनेमा, होटल मीना-बाजार की चमक-दमक रखनेवाली दूकानें, आइस्क्रीम तथा भिन्न-भिन्न खाधान्न और आधुनिक सुख-सामग्री । बंबई में उसका मन रमने लगा ।" [86]

मातृत्व की आसक्ती –

वीणा के मन में एक शल्य था जो भीतर ही भीतर उसे चुभता था कि उसकी कोख अब तक रीती की रीती ही है । विवाह को अब पंद्रह वर्ष होने आये, फिर भी वह नहीं भरी सो नहीं भरी । "मातृत्व" नारी का चरमसाध्य है और उसीमें नारी की पूर्णता है । शेवड़ेजी ने वीणा के मन की वेदना यहाँ अत्यंत मनोवैज्ञानिक ढंग से पेश की है । मातृत्व की भावना नारी के लिए अत्यंत संवेदनशील, भावुक है । रामधारी सिंह "दिनकर" नारी को मातृत्व का वरदान पाकर सृजनशीलदेवी बताते हुए कहते हैं –

"बिना पुत्र नारी का सम्यक रूप नहीं खुल पाता
जीवन में प्रवेश करती है नारी माता बनकर ।"[87]

इसीप्रकार वीणा भी अपना जीवन सफल बनाने के लिए मातृत्व की भूखी रही है । प्रोफेसर ज्ञानशंकर दार्शनिक थे इसलिए, जो भाग्य में नहीं है उसके लिए क्या रोना ? कहकर अपना समाधान कर सकते थे । पर वीणा स्त्री थी, दार्शनिक की पत्नी थी पर स्वयं दार्शनिक नहीं थी । "उसका सारा मन, शरीर और हृदय मातृत्व के लिए छटपटा रहा था, तड़पता था, पर उसकी वह क्षुधा अब तक अतृप्त थी, अदम्य थी ।"

सहनशीलता – वीणा और ज्ञानशंकर के विवाह को पंद्रह वर्ष पश्चात् भी वीणा माता न बन सकी । भीतर ही भीतर वह (वीणा) कुढ़ा करती थी, असुखी रहती थी पर पति से इसके बारे में विशेष चर्चा नहीं करती थी क्यों कि वह नाहक उनका मन दुखाना नहीं चाहती थी । इसप्रकार उसमें सहनशीलता दिखाई देती है । सहनशीलता की अग्निपरीक्षा में वीणा पंद्रह वर्षों तक अपना हृदय जलाती है ।

विद्रोही मन –

लेकिन जब उसे यह मालुम होता है कि वह मातृत्व धारण कर सकती है और वह निर्दोष है, (बल्कि पति में कुछ दोष है) तब अपने पति के प्रति एक सूक्ष्म असंतोष और विद्रोह की भावना उसके दिल में भड़क उठी । उसे लगा जैसे उसके साथ धोखा हुआ है । पर ऊपर से वह एक सुप्त ज्वालामुखी की तरह शान्त थी ।

पर जब दलीप उसके इस कमजोरी पर आघात करता हे तब निराशा और विफलता की भावना से ग्रस्त होती है । अपने आप को अपूर्ण, अविकसित मानती है । मातृत्व की इच्छा जो अब तक उसने दबाकर रखी थी वह दलीप को सामने पाकर उछलकर सामने आती है । और इसी विद्रोही मन से वह दलीप को अपना सर्वस्व दान करती है । और जब यह बात डा.ज्ञानशंकर को मालुम हो जाती है

तब वह अपना गुनाह भी कबूल कर लेती है और उस समय डा.ज्ञानशंकर उसके साथ बड़ी सक्ती से पेश आते है फिर भी वह चूपचाप सब सह लेती है ।

"नारी स्वभाव का यह महत्वपूर्ण बिंदु है कि नारी अपने अधिकार में एक गृह की कल्पना करती है, उस आशामय जीवन की भविष्यमय कल्पना के भावतरंगों में सुरक्षा और मातृत्व का बिन्दु प्रमुख होता है ।"[89] वीणा के बारे में यही दिखाई देता है । मन की बात वह होठों तक नहीं लाती । परंतु जब उसे डा.ज्ञानशंकर की ओर से निराशा दिखाई देती तभी वह विद्रोही बन जाती है ।

दया तथा प्रेम –

वीणा में प्रेम-भावना भी दिखाई देती है । डा.ज्ञानशंकर के प्रति उसका प्रेम आदरयुक्त था । लेकिन दलीप को उपना सर्वस्व देकर विद्रोह प्रकट करने के पश्चात वह पश्चात्ताप दग्ध हो जाती है और भद्रपुर से लौटे ज्ञानशंकर के प्रति वह अधिक प्रेम जताने लगती है ।

दलीप के कारण वीणा माँ बननेवाली होती है लेकिन बड़ी आसानी से दलीप उसे गर्भ-पात की सलाह देता है तब वह दलीप से कहती है, "जीव-हत्या ? जिसके लिए मैं जिंदगीभर तड़पती रही और जिसके लिए मैंने अपनी गृहस्थी को भी खतरे में ड़ाल दिया उसकी हत्या करूँ ?"[90] इस बच्चे के खातिर वह दलीप जैसे आवारा आदमी से भी शादी की बात करती है । परंतु जब दलीप से नकार सुनती है और भ्रुण-हत्या की सलाह सुनती है तब से वह दलीप की घृणा करने लगती है ।

स्वाभिमान –

वीणा मातृत्व की अदम्य इच्छा के कारण विवशता की अवस्था में दलीप के सामने अपने आप को सँभल नहीं पाती लेकिन जब दलीप से (वह शादी के लिए तैयार हो जाने के बाद भी) नकार सुनती है और फिर भी जब दलीप उसकी अभिलाषा

करता है तब वह दृढ़ता से उसे फटकारती है, "मै अकेले ही अपनी किस्मत भोग लूँगी ।" तथा "दलीप ! तुमने दूसरी औरतें देखी होंगी पर अभी तुम उनके दिल को नहीं समझ सके हो । अब तुम दुबारा इसतरह की बात जबान पर मत लाना भला ? वरना मेरा घोर अपमान होगा । मैं इसे बर्दाश्त नहीं करूँगी ।"[91] इसप्रकार वीणा मातृत्व की भूखी होने के कारण इस नैतिक पतन की शिकार होती है । फिर भी प्रो. ज्ञानशंकर के व्यक्तित्त्व का जबर्दस्त आकर्षण उसे बाजारू औरत बनाने से बचाता है और वह गिरते गिरते सँभल जाती है । और इसीसे उसका स्वाभिमान जागृत हुआ दिखाई देता है ।

इस घटना के बाद डॉ.सुमन्त तथा डा.सुमित्रा के पास वीणा उपचारार्थ जाती है और उस वक्त उसका (वीणा) गर्भ - पात हो जाता है । डा.ज्ञानशंकर और वीणा में जो खाई निर्माण हुई थी उसे यह डा.दम्पत्ती जोड़ देते हैं और डा.ज्ञानशंकर-वीणा फिर गृहस्थी निभाने लगते हैं ।

डा. गुंजीकरजी के अनुसार "सुनीता" उपन्यास के समान इस उपन्यास में "रवीन्द्रनाथ के "घरे-बाहरे" टाइप की समस्या को भी उठाया गया है । "इंद्रधनुष" में वीणा के घर (EGO) में बाहर (ID) दलीप की आकांक्षा है, पुकार है और "घर", "बाहर" के प्रति आत्मसमर्पण के लिए लाचार हे । यहाँ शेवड़े ने दलीप "बाहर" को केवल सेक्सपूर्ति के लिए आक्रमक रूप में "घर"के भीतर प्रवेश करता है "[92] यह दिखाया हे । वीणा में मातृत्व की इच्छापूर्ति की भूख है । पंद्रह वर्षों तक वह इस इच्छा को दमित रखती है और उसका परिणाम इसतरह लाचार रूप में प्रदर्शित होता है । इसे लाचार रूप कहना अधिक उचित लगता है क्यों कि उसमें (वीणा) अगर विद्रोह की भावना प्रबल होती तो वह अपने आपको पश्चात्ताप की अग्नि में इतनी नहीं जलाती कि उसका गर्भपात होने तक की नौबत आ जाय । और अगर उसने विद्रोह भावना से यह समर्पण किया हो तो डा. सुमन्त के मतानुसार "क्या वह सबूत की झूठी सफाई नहीं दे सकती ? क्या

आपने अपनी आँखो से कुछ देखा है ? " [93] अथवा "अगर वह रात का आना मंजूर न करती तो उस समय आपके पास और क्या सबूत था – सिवा रूमाल के ? " [94] इसतरह के सवाल डा.सुमन्त डा.ज्ञानशंकर से पूछते हैं इससे यह साबित होता है कि वीणा ने विद्रोह के रूप में यह कृति नहीं की थी बल्कि अपनी अदम्य इच्छा की पूर्ति करने का प्रयत्न किया है । "इसप्रकार शेवड़ेजी ने मातृत्व की भूखी नारी के आधार पर " सतीत्व " की मानवतावादी परिभाषा भी दी है ।" [95] और इसी बहाने लेखक ने अपना दृष्टिकोन व्यक्त करते हुए कहा है कि बिना कारण के कोई दोष नहीं करता, बिना परिस्थितियों के कोई पाप नहीं करता । तथा, "स्त्री और पुरूषों के शारीरिक प्रेम में पाप नहीं है, क्यों कि शरीरों के मिलन से ही आत्मा का मिलन होता है, शरीरों के मिलन से ही सृजन होता है और सृजन का सर्वोच्च देवता है सूर्य ।" [96] शेवड़ेजी ने इसतरह वीणा के अंतर्मन में चलने वाले गुत्थीयों को सुलझाया है और होनेवाले पाप के लिए सहानुभूति दिखाते है । वीणा व्दारा गलती तो हो गई है लेकिन इसके लिए वह अकेली दोषी नहीं है डा.ज्ञानशंकर भी उतने ही जिम्मेदार हैं । क्यों कि "नारी स्वभाव की मनोवैज्ञानिक विशेषता है कि प्रेम-प्रसंग मे नारी धोखेबाजी और अन्याय सहन नहीं कर सकती जिस पुरूष ने उसके साथ अन्याय किया हो वह कतई उसे क्षमा भी नहीं कर सकती ।" [97] इसको ध्यान में रखकर हम कह सकते हैं कि अगर ज्ञानशंकर वीणा को विश्वास में लेकर अपनी कमजोरी बताते तो कदाचित वीणा पथभ्रष्ट नहीं होती क्यों कि ज्ञानशंकर के प्रति वह आदरयुक्त प्रेम भावना रखाती थी ।

"मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार अपने पात्रों के जीवन के मार्मिक स्थलों को पहले ढूँढ़ता है और फिर उनपर पड़े विभिन्न देश, काल और परिस्थितियों के प्रभाव को दिखलाते हुए पात्रों में आनेवाले परिवर्तन और उनके आंतरिक कारणों की खोज़ करता है । पात्र की अनुभूतियों के बहाने मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार अपनी तथा समस्त मानवमात्र की अनुभूतियों का चित्रण करता ।" [97] इसी तथ्य के आधार पर

शेवड़ेजी ने वीणा के मातृत्व इच्छा को ध्यान में रखकर उसके सामने दलीप जैसे आवारा, हीन-ग्रंथि युक्त, उत्शृंखल व्यक्तित्व को रखा और फिर डा.ज्ञानशंकर, डा.सुमन्त सुमित्रा जैसे व्यक्तियों का आदर्शसामने रखकर पथभ्रष्ट वीणा को पुनः मार्गस्थ बनाया और अपना स्वस्थ, सात्विक एवं विधायक दृष्टिकोन दिखाया है ।

शेवड़ेजी ने वीणा की पथभ्रष्टता का समर्थन भी किया है । उसे पूरी तरह से निर्दोषित साबित करने का प्रयत्न करते हुए कहा है कि, "कोई भी संस्कारी स्त्री साधारणतः वाम-मार्ग पर नहीं जाती, नहीं जाना चाहती, पर पति की तरफ से निराश होने के कारण वह आत्मतुष्टि की तलाश में उस मार्ग पर जाने के लिए प्रेरित होती है, इस आशा से कि जो चीज उसे पति के पास से नहीं मिली वह अन्यत्र मिलेगी ।" [99] इसप्रकार लौकिक दृष्टि से वीणा का व्यवहार व्यभिचार है पर मानवता की दृष्टि से, शारीरिक तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से वह पूर्ण निर्दोष है ।

इसप्रकार मातृत्व की क्षुधा तृप्त न होने के कारण वीणा के दाम्पत्य जीवन का जो -हास हुआ है उसे फिर से डा.सुमन्त तथा सुमित्रा फिर से जुड़ा देते है । "इसमें लगता है कि यथार्थ और आधुनिक जीवन की कुंठाओं और विशृंखलता ओं के चित्रण की ओर शेवड़ेजी जरा अधिक झुके हैं । फिर भी उनका आदर्श नहीं छूटा है । पत्नी की पथ-भ्रष्टता के बावजूद डा.ज्ञानशंकर की घर उजड़ नहीं पाया, उजड़ते उजड़ते बच ही नहीं गया, लेकिन अधिक दृढ़ता और मजबूती के साथ विस्थापित हो गया ।" [29] इसतरह वीणा को पहले विद्रोही रूप में प्रस्तुत किया हे और वही वीणा फिर एक संयमी शांत भारतीय पत्नी के रूप में परिवर्तित दिखलाई है ।

निष्कर्ष -

श्री.शेवड़े जी के उपर्युक्त छः उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक ढंग से नायिकाओं का चित्रण किया गया है । फ्रायड़ के अनेक तत्वों को आधार मानकर शेवड़ेजी ने इन नायिकाओं के मन के सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों का रेखाटन कुशलता से किया है । उपन्यासों में चित्रित इन नायिकाओं को हम इसतरह विभाजित कर सकते हैं -

अंतर्मुखी श्रेणी में साधारणतः मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के नायक-नायिकाएँ आती है । इंद्रधनुष की "वीणा" इसी श्रेणी की है । अपनी मातृत्व-इच्छा के लिए उसकी मनोदशा अत्यंत विकल बनी है ।

बहिर्मुखी भावुक कोटि में साधारणतः नारीजगत् आता है । भारतीय नारियों की विशेषता है कि परंपरा से चिपके रहना और दूसरों में अनावश्यक रूचि रखना, तर्कशक्ति की अपेक्षा इसमें अनुभव शक्ति अधिक पाई जाती है । शेवड़ेजी के उपन्यासों में से "निशा-गीत" की नर्स सुशीला, "मृगजल" की मरियम तथा "अधूरा सपना" की सुहासिनी ये नारियाँ इसी कोटि में आती है । मौका मिलकर भी ये नारियाँ अपना ऊत्थान नहीं करतीं स्वयं दुःखों को सहती है लेकिन अपना पतन नहीं होने देतीं ।

अंतर्मुखी अंतर्दशक कोटि में आनेवाले पात्र अधिकतर रहस्यवादी होते हैं । और भावुक भी । लोगों की बातों की अपेक्षा उनके आंतरिक अर्थों पर उनका ध्यान अधिक रहता है कार्यों की विचित्रता उन्हें सबके विश्वास पात्र बनने नहीं देती । "पूर्णिमा" उपन्यास की पूर्णिमा इसीतरह की है । विनयकुमार से विलास की निंदा सहन न होकर उसे अपमानित करती है लेकिन वह बीमार पड़ने पर भावुक बनकर उसकी सेवा भी करती है ।

बहिर्मुखी अंतर्दशक श्रेणी में अस्थिर विचारवाले वे संसारी जीव आते हैं जो किसी कार्य के कारण और प्रभाव को सोच ही नहीं पाते वे अधिकतर भाग्यवादी होते

हैं । "मंगला" उपन्यास की मंगला इसतरह की है । अपने भाग्य का विरोध करके चंद्रकान्त के साथ बंबई जाती है लेकिन बाद में मन परिवर्तन के कारण पछताती है ।

इसतरह हम देखते हैं कि शेवड़ेजी ने उपर्युक्त छः नायिकाओं के मनोव्यापार अत्यंत सुक्ष्मता से अंकित किए हैं । नारी मन की वेदना को मुखरित किया है । अपने उपन्यासों में नारी के अतृप्त प्रेम, अविकसित रागभावना को अभिव्यक्ति दी है । उसे चित्रित करते हुए उन्होंने नारी मनोभावों का मनोवैज्ञानिक ढंग सकुशलता से अपनाया है । मनोवैज्ञानिकता जैसी विज्ञान निष्ठा अपने उपन्यासों में व्यक्त की है फिर भी स्वयं उनमें भारतीय दर्शन की जड़े अत्यंत मजबूती से स्थापित है जिससे ये पात्र भारतीय संस्कृति की हिमायत करते हुए नजर आते हैं । यौन भावनाओं के उद्‌दाम आवेग में बहकर जाते जाते हृदय-परिवर्तन की नाँव उन्हें बचाती है । नारी की ओर शेवड़ेजी का दृष्टिकोन हमेशा सहिष्णु रहा है । आधुनिक जीवन की कुंठाओं और श्रृंखलाओं का चित्रण करते हुए भी उन्होंने अपना आदर्शवादी दृष्टिकोन हमेशा प्रज्ज्वलित रखा है । विद्रोह करनेवाली नारियों को हृदय परिवर्तन व्दारा ऊपर उठाने की कोशिश करके उन्होंने अपनी आदर्शवादिता सिध्द की है । गलती से हुए पाप को क्षमा के योग्य बताकर इन नारियों की ओर सहानुभूति प्रदान की है । संक्षेप में शेवड़ेजी नारी जीवन की ओर श्रध्दा भाव ही दिखाते हैं। जयशंकर प्रसाद के कामायनी में जिस भाव से कवी ने श्रध्दा दिखाई है उसी भाव का प्रतिपादन शेवड़ेजी ने किया हुआ दिखाई देता है –

"नारी तुम केवल श्रध्दा हो
विश्वास रजत् नग पग तल में ।
पीयुष स्त्रोत सी बहा करो
जीवन के सुंदर समतल में ।
नारी तुम इस धरती पर
सुख बरसाने आई हो
सब जीने का संबल
संगीत साथ लाई हो ।"

(जयशंकर प्रसाद " कामायनी " पृ. 114)

—:: चतुर्थ अध्याय ::—

संदर्भ – सूची

1. डॉ. शं.ना. गुंजीकर, "अ.गो.शेवडे और उनका साहित्य", पृ. 133

2. डॉ. धनराज मानधाने, "हिंदी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास", पृ. 31

3. – वही – पृ. 44

4. डॉ. देवराज उपाध्याय, "आधुनिक हिन्दी कथासाहित्य और मनोविज्ञान", पृ. 14

5. डॉ. धनराज मानधाने, "हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास", पृ. 46-47

6. – वही – पृ 47

7. संपादक रामदरश मिश्र, "हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष", पृ. 52

8. डॉ. शं.ना. गुंजीकर, "अ.गो.शेवडे और उनका साहित्य", पृ. 136

9. डॉ. धनराज मानधाने, "हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास", पृ. 65

10. – वही – पृ. 287

11. – वही – पृ. 77

12. – वही – पृ. 79

13. संपादक बांकेबिहारी भटनागर, "शेवडे : व्यक्तित्व, विचार और कृति", पृ. 85

14. डॉ. शं.ना.गुंजीकर, "अ.गो.शेवडे और उनका साहित्य", पृ. 46

15. – वही – पृ. 46

16. – वही – पृ. 22

17. अ.गो. शेवडे, "मृगजल", पृ. 58

18. – वही – पृ. 67

19. – वही – पृ. 100

20. – वही – पृ. 101

21. – वही – पृ. 97

22. – वही – पृ. 125

23. – वही – पृ. 109

24. – वही – पृ. 115

25. सुषमा धवन, "हिन्दी उपन्यास", पृ. 268

26. संपा. बांकेबिहारी भटनागर, "शेवडे : व्यक्तित्व, विचार और कृति", पृ. 64

27. अ. गो. शेवडे , "मृगजल", पृ. 251

28. शं.ना.गुंजीकर, "अ.गो. शेवडे और उनका साहित्य", पृ. 161

29. अ.गो. शेवडे, "मृगजल", पृ. 252

30. – वही –

31. विमल सहस्त्रबुध्दे, "हिंदी उपन्यासों मे नारी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषन" पृ. 178

32. शं.ना. गुंजीकर, "अ.गो. शेवडे और उनका साहित्य", पृ. 162

33. – वही –

34. – वही – पृ.162–163

35. सुषमा धवन, "हिन्दी उपन्यास", पृ. 269

36. अ.गो. शेवडे, "निशागीत", उपन्यास की सम्मतियों में से उधृत,

37. – वही – पृ. 23

38. – वही – पृ. 23

39. – वही – पृ. 58

40. सुषमा धवन, "हिन्दी उपन्यास", पृ. 262

41. अ.गो.शेवडे "निशागीत", पृ. 88

42. – वही – पृ. 89

43. – वही – पृ. 54

44. – वही – पृ. 55

45. विमल सहस्त्रबुध्दे, "हिन्दी उपन्यासों में नारी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण", पृ. 179

46. डॉ. शं.ना.गुंजीकर, "अ.गो.शेवडे और उनका साहित्य", पृ. 157

47. अ.गो.शेवडे "निशागीत", पृ. 147

48. – वही – "पूर्णिमा", पृ. 84

49. डॉ.शं.ना. गुंजीकर, "अ.गो.शेवडे और उनका साहित्य" पृ.200–201

50. विमल सहस्त्रबुध्दे, "हिन्दी उपन्यासों में नारी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण", पृ. 179

51. अ.गो. शेवडे, "पूर्णिमा", पृ. 156

52. – वही – पृ. 91

53. – वही – पृ. 114

54. – वही – पृ. 128

55. – वही – पृ. 129

56. – वही – पृ. 136

57. – वही – , " मंगला " पृ. 8

58. – वही – पृ. 43

59. – वही – पृ. 43

60. – वही – पृ. 61

61. – वही – पृ. 23

62. – वही – पृ. 135

63. – वही – पृ. 25

64. डॉ. शं.ना. गुंजीकर, "अ.गो.शेवडे और उनका साहित्य", पृ. 146

65. निर्मल सहस्त्रबुध्दे, "हिन्दी उपन्यासों में नारी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण", पृ. 174

66. – वही – पृ. 172

67. अ.गो. शेवडे, " मंगला " पृ. 42

68. – वही – पृ. 131

69. – वही – पृ. 141

70. डॉ.शं.ना. गुंजीकर, "अ.गो.शेवडे और उनका साहित्य" पृ. 213

71. अ.गो. शेवडे , "अधूरा सपना" पृ. 18

72. – वही – पृ. 35

73. – वही – पृ.18–19

74. – वही – पृ. 21

75. – वही – पृ. 22

76. – वही – पृ. 25

77. – वही – पृ. 30

78. – वही – पृ. 43

79. डॉ.शं.ना. गुंजीकर, "अ.गो.शेवडे और उनका साहित्य" पृ.147-148
80. - वही - पृ. 149
81. - वही - पृ. 150
82. अ.गो. शेवडे, "अधूरा सपना" पृ. 116
83. संपा. बाँकेबिहारी भटनागर, "शेवडे व्यक्तित्व, विचार और कृति", पृ. 78
84. डॉ.शं.ना.गुंजीकर, "अ.गो.शेवडे और उनका साहित्य" पृ. 163
85. अ.गो.शेवडे, " इंद्रधनुष " पृ. 21
86. - वही - पृ. 24
87. रामधारी सिंह, "दिनकर", "रसवंती",("नारी कविता"), पृ. 30
88. अ.गो.शेवडे, " इंद्रधनुष " पृ. 23
89. विमल सहस्त्रबुध्दे, "हिन्दी उपन्यासों में नारी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण" पृ. 312
90. अ.गो शेवडे, " इंद्रधनुष " पृ. 118
91. - वही - पृ. 120
92. डॉ. शं.ना.गुंजीकर, "अ.गो.शेवडे और उनका साहित्य" पृ. 164
93. अ.गो. शेवडे, " इंद्रधनुष " पृ. 141
94. - वही - पृ. 142
95. डॉ. शं.ना. गुंजीकर, "अ.गो.शेवडे और उनका साहित्य" पृ. 163
96. अ.गो. शेवडे, " इंद्रधनुष " पृ. 94
97. विमल सहस्त्रबुध्दे, "हिंदी उपन्यासों में नारी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण" पृ. 295
98. धनराज मानधाने, "हिंदी के मनोवैज्ञानिक उपन्यास" पृ. 288
99. अ.गो. शेवडे, " इंद्रधनुष " पृ. 185
100. संपा. बाँकेबिहारी भटनागर, शेवडे : व्यक्तित्व,विचार और कृति, पृ. 61